प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल,
नई दिल्ली

पहली बार १९५७

मूल्य

डेढ रुपये

प्रकाशकीय

नये-नये देशों-नई-नई जगहों के बारे में जानने की इच्छा सभी को होती है। लेकिन सभी को नई-नई जगह जाने का अवसर मिले सो बात नहीं। जिन्हें स्वयं जाने का और देखने का अवसर नहीं मिलता, वे जाने वालों की बातें सुनकर या पढ़कर अपनी जिज्ञासा को किसी हद तक शांत कर सकते हैं और जिन्हें खुद भी जाने का अवसर मिले, वे अपने से पहले जानेवालों के अनुभवों से लाभ उठा सकते हैं।

सम्भवतः यही कारण है कि 'मंडल' ने यात्रा-संबंधी जितनी भी पुस्तकें निकाली, पाठकों ने उन्हें पसंद किया। 'लद्दाख-यात्रा की डायरी', 'हिमालय की गोद में', 'जय अमरनाथ' आदि पुस्तकों की लोकप्रियता इसका प्रमाण है। अपने पाठकों की इसी पसंद से उत्साहित होकर हम समय-समय पर ऐसी पुस्तकें निकालते रहे हैं, तथा भविष्य में और भी निकालने का विचार है।

जापान न केवल एशिया का अपितु समस्त संसार का एक महत्वपूर्ण देश है। विश्वयुद्ध में पराजय के थपेड़े सहने के बाद भी जिस तेजी से जापानियों ने अपने देश का पुनर्निर्माण किया है, वह प्रशंसनीय और अनुकरणीय है। एक एशियाई देश होने के नाते जापान के बारे में और अधिक जानकारी पाना हमारे लिए और भी ज्यादा जरूरी हो जाता है।

आशा है प्रस्तुत पुस्तक हमारे पाठको को पसद आयेगी।

—मंत्री

लेखक की ओर से

अपने जापान-प्रवास में हमें वहां के बारे में बहुत-सी नई बातें जानने को मिलीं और काफी नये संस्मरण लेकर आये। यहां मित्रों के आग्रह से मैंने अपने अनुभवों को लेखों के रूप में लिख लिया। बाद में ये लेख एक साप्ताहिक पत्र में धारावाहिक रूप से प्रकाशित भी हुए। कई मित्रों को वे पसंद आये। उनमें से कइयों का आग्रह हुआ कि कुछ सामग्री और जोडकर उन्हें किताब के रूप में छपा दिया जाय।

मैं कोई लेखक तो हूं नहीं, न किताब लिखने की मुझे आदत है, न शौक ही। मेरे नाम से किताब छपने का यह पहला ही अवसर है। इसलिए मुझे स्वाभाविक संकोच रहा। फिर भी मित्रों के आग्रह के सामने मेरा वस नहीं चला और यह पुस्तक उसीका परिणाम है।

मैंने इस पुस्तक में अपने छोटे-मोटे अनुभवों व अनुभूतियों को ज्यों-का-त्यों लिख दिया है। आशा है, जो लोग जापान की यात्रा करने का विचार करते हैं, उन्हें इन अनुभवों का कुछ लाभ मिल सकेगा। मुझे तो जितने मित्र मिलते हैं, उन सबको आग्रहपूर्वक मैं तो यही सलाह देता हूं कि उनको जापान जरूर जाना चाहिए। विदेश जाना हो तो भी यूरोप की बजाय वे जापान पहले जाय, ऐसा मुझे लगता है। यूरोप की बजाय जापान से हमारा सामीप्य भी अधिक है और सीखने को भी अधिक मिल सकता है।

—रामकृष्ण बजाज

विषय-सूची

जापान की सैर

इटरनेशनल चेंबर आफ कामर्स के प्रतिनिधियो के सम्मान में हुए भोज में

(बाये से दाये) १ लेखक, २ लालजी मेहरोत्रा, ३ जापान के राजकुमार टकामत्सु, ४ विमला बजाज, ५ राजकुमार की पत्नी ६ श्री बसल

जापान की सैर

: १ :

रंगून पहुंचे

गर्मियो मे इस साल कही दूर घूमने जाने का मन हो रहा था, परतु कहा जाय, इसका कुछ निश्चय नही हो पा रहा था। तभी खवर मिली कि इस साल का अतर्राष्ट्रीय कामर्स चैंवर का जलसा टोकियो मे हो रहा है और महाराष्ट्र कामर्स चैंवर ने सुझाया कि मै भारत की तरफ से प्रतिनिधि होकर क्यो न जाऊ। सोचा, चलो जापान ही घूम आवे। पूर्व की तरफ लोग कम ही जाते है। जापान की उन्नति की प्रशसा भी सुन चुके थे। अत तीन मास के लिए सुदूरपूर्व की यात्रा का कार्यक्रम वना। हमारी यात्रा कलकत्ते से प्रारभ होनी थी। सो वहा पहुचे। कलकत्ता वहुत गरम था, परतु ३ तारीख की रात को ही रिम-झिम वर्षा होने लगी, मानो प्रकृति देवी हमे प्रसन्नतापूर्वक विदा कर रही हो, लेकिन हमारा वायुयान हमे भारत से दूर ले जाने मे जैसे हिचक रहा था! पहले सुना कि दो घटे की देरी से जायगा। फिर दो घटे से वढकर तीन घटे हो गये, तव कही रवाना हुआ।

कलकत्ते से रवाना होकर सवसे पहले रगून पहुचे। यह जगह काफी अच्छी लगी। यहा का सिक्का 'चाट' कहलाता है।

चाट को १०० भागो मे वाटा गया है। इनमे से प्रत्येक को 'पियाज' कहते है। सरकारी मुद्रा-मूल्य की दृष्टि से हमारे रुपए के बराबर ही चाट की कीमत है। किंतु बाजारो मे हमारे १००) के बदले १६० चाट मिल जाते है। भारत के लोगो और सिक्के दोनो का ही यहा अच्छा सम्मान है।

रगून का विश्वविख्यात 'पगोडा' (बुद्ध मदिर) तो हमने देखा ही, साथ ही 'पीस पगोडा' (शाति-मदिर) भी देखा। यह नवनिर्मित देवालय शहर से लगभग सात मील दूर है। उसके निर्माण के लिए दुनिया भर के बौद्धो ने चदा दिया। समस्त ससार मे शाति की स्थापना कैसे हो सकती है, इस प्रश्न पर विचार करने के लिए पिछले दिनो यहा बौद्धो की विश्वपरिषद् का एक विशाल सम्मेलन हुआ था। उसी जगह पर यह नया मदिर बना है। मदिर छोटा है, परतु है सुदर।

पीस पगोडा के पास ही परिषद् के लिए एक बडा भारी पक्का मडप बनाया गया है। इसे 'गुफा' कहते है। एकदम नए ढग से बनाया गया यह मडप बडा ही दर्शनीय है। भीतर से यह बहुत बडा है। करीब ६-७ हजार आदमी उसमे आसानी से बैठ सकते है। बाहर से उसे गुफा का रूप दिया गया है। बाहर की तरफ चट्टानो से आच्छादित होने के कारण वह साधारण पथरीली पहाडी-जैसा लगता है।

इस गुफा के भीतर प्रकाश और हवा के लिए समुचित व्यवस्था की गई है। बैठने के लिए सुव्यवस्था है। लोगो से भरा सभा-गृह अत्यत भव्य लगता होगा।

इसके निर्माण मे एक करोड से अधिक रुपया खर्च हुआ।

इसे बनाने का अधिकाश श्रेय बर्मा के प्रधान मत्री श्री ऊ नू को है। ऐसे कार्यो मे वह व्यक्तिगत रूप से भी बडा रस लेते है। अपनी निजी देखरेख मे सारा काम करवाते है।

इस सभा-गृह के निर्माण को लेकर एक बडी रोचक घटना सुनने मे आई। श्री ऊ नू ने कई विख्यात शिल्पी और स्थापत्य-कला-विशेषज्ञ बुलवाये और उनसे नक्शा बनाने को कहा। उन्होने अपने दृष्टिकोण को समझाते हुए कहा कि भवन मे ये तीन बाते तो होनी ही चाहिए—

१ देखने मे एकदम सादा और स्वाभाविक हो, २ सुदर, स्वच्छ और सुव्यवस्थित हो, तथा ३ आधुनिक सुविधाओ से पूर्ण हो।

बडे-बडे कलाकारो ने अपने-अपने नक्शे पेश किये, पर नू महोदय को किसीका भी नक्शा पसद न आया।

इसी बीच श्री नू को एक स्वप्न आया। इस स्वप्न मे उन्हे यह भवन कैसा हो, इसका पूरा नक्शा साफ-साफ दिखाई दिया। कहा जाता है, उसी समय बर्मा के एक प्रसिद्ध शिल्पी को भी ठीक वैसा ही स्वप्न आया और उसने भी भवन का वही नक्शा देखा। दूसरे दिन नक्शा बनवाकर उसने श्री ऊ नू के सामने प्रस्तुत किया। देखकर वह खुशी से उछल पडे ! शिल्पी सचमुच उनके स्वप्न को नक्शे मे उतारकर ले आया था।

रगून मे भारतीयो की सख्या काफी है। नगर की जनसख्या लगभग ८ लाख है, जिसमे करीब एक-तिहाई भारतीय है। अधिकतर मुसलमान है। जो भारतीय यहा रहते है और बर्मा के

निवासी होना चाहते हे उन्हे वर्मी सरकार ने वर्मी होने की इजाजत दी थी, लेकिन वहुत कम हिंदुस्तानी वहा के वाशिदे वने। आपस मे भी एकता कम हे। कमाई यहा करते है, पर यहा के लोगो पर खर्च न करके भारत मे ही वे पैसा भेजना चाहते है। इससे हिंदुस्तानियो के प्रति दुर्भावना वढ रही है। वर्मी सरकार ने भी भारत भेजे जानेवाले रुपये पर प्रतिवध लगा दिया है। वास्तव मे एक प्रकार की सकुचित राष्ट्रीयता का प्रसार यहा हो रहा है।

रगून की दूकानो पर अधिकतर स्त्रिया ही वैठती है। पूरी दूकान वे ही चलाती है। साधारण और उच्च अधिकारियो की पत्निया ही नही, वडे-वडे मत्रियो की स्त्रिया भी अपनी-अपनी स्वतत्र दूकाने भलीभाति चलाती है। वच्चे या तो स्कूल जाते है, या इन दूकानो पर अपनी माताओ की मदद करते है। भोजन के समय दूकान पर वैठकर ही वाजार से खरीदकर खाना खा लिया जाता है। दीखने मे सुदर और भले-भले घरो की महिलाए अपने साहस और वल-वूते पर दूकाने चलाती है। स्कूलो और दफ्तरो मे नौकरी करके वेतन-भर कमा लेनेवाली स्त्रिया तो सारे ससार मे पाई जाती है, परतु अपने कधो पर व्यापार के उतार-चढाव का भार लेकर तथा अपनी पूरी जिम्मेदारी पर दूकान चलाना कुछ और ही वात है। कोई यह नही कह सकता कि इन स्त्रियो की योग्यता और कार्य-क्षमता मे कोई कमी है। काम फुरती और सफाई से होता है। हिसाव-किताव भी वे स्वय लिखती है। भावो मे कमी-वेशी करना, नए-नए ग्राहको को अपने माल के प्रति आकर्षित करना, विल वनाना आदि सारे कार्य वे दक्षतापूर्वक कर

लेती है। यदि दुनिया के दूसरे मुल्को की महिलाए भी रगून की अपनी वहनो की नकल करने लग जाय तो पुरुपो के लिए एक वहुत वडा सकट और प्रतियोगिता उत्पन्न हो जाने का पूरा-पूरा डर हो जायगा।

जिस प्रकार हमारे देश मे होली होती है, उसी प्रकार बर्मा मे जल-उत्सव मनाया जाता है। तेज गर्मियो के बाद, वर्षा-ऋतु के आरभकाल से कुछ पहले यह उत्सव आता है। सब लोग वर्षा रानी का हार्दिक स्वागत करने को तैयार हो जाते है। तीन-चार दिन तक दफ्तर वगैरा बद-से रहते है। रास्ते-चलते हर किसी जाने-अनजाने व्यक्ति को पानी से तर कर दिया जाता है। अपने यहा की तरह वहा पानी मे रग डालने का रिवाज नही है। सडको पर नल के जोड (कनेक्शन) खोल लिये जाते है, जिससे इन दिनो सडको पर पानी-ही-पानी दिखाई देता है। घरो मे नहाने के लिए पानी खरीदकर लाना पडता है, पर यह सार्वजनिक स्नान जरूर मुफ्त हो जाता है।

हम लोग वहा पहुचे उसके कुछ ही रोज पहले जो जल-उत्सव वहा हुआ था उसमें श्री जवाहरलाल नेहरू ने भी वाडुग जाते समय भाग लिया था। इससे वहा के लोगो मे वडा उत्साह था।

जल-उत्सव के पर्व पर वर्मी लोग पारस्परिक वैर-भाव भूल जाते है, और इस खुशी और मेल-मिलाप के नए वातावरण मे कई नई सगाइया भी तय हो जाती है। जितना वडा यह उत्सव है, उतने ही अधिक उत्साह और हर्ष से वर्मी लोग इसे मनाते है।

: २ :

रंगून से याकोहामा

जकार्ता—रगून से हम लोग हवाई-जहाज से सीधे इडोनेशिया की राजधानी जकार्ता पहुचे। यहाका अनुभव बहुत सुखद नही रहा। भारतीय दूतावास ने किसी होटल मे हम लोगो के ठहरने का इतजाम किया था, लेकिन हमारे पहुचने के कुछ रोज बाद बाडुग-कान्फ्रेस होनेवाली थी, इसलिए वहाकी सरकार ने बिना किसी सूचना के हमारा कमरा ले लिया। जकार्ता के और किसी भी होटल मे जगह का मिलना असभव था। हम लोग बडे पसोपेश मे पड गये। आखिर भारतीय दूतावास के एक कर्मचारी के यहा हम लोगो को रात बितानी पडी। दूसरे रोज के० एल० एम० हवाई जहाजवालो ने बड़ी कठिनाई से अपने यहा हम लोगो के लिए जगह कर दी। सभी जगह के० एल० एम० का अनुभव हम लोगो को अच्छा रहा।

जकार्ता शहर खास दर्शनीय नही लगा। वहाके लोग भी बहुत साफ-सुथरे नही थे। शहर के बीच से एक लबी नहर जाती है, जो कि काफी गदी है, शहर का नाला भी उसीमे जाता है। उसमे ढोर पानी पीते है, लोग कपडे धोते है और कुछ लोगो को हमने नहाते हुए भी देखा। देश मे अत्यधिक गरीबी होते हुए भी चीजो के दाम और रहन-सहन का खर्च बहुत अधिक है। रिक्शा आदि भी बडे महगे थे। एक हाथी-दात का सिगरेट-होल्डर, जिसे हम लोग यहासे दो रुपये मे ले गये थे, उसके लिए वहाका

एक दूकानदार ४०-४५ रुपये तक देने को तैयार था और आग्रह-पूर्वक माग रहा था।

यहा के लोगो मे हमने एक विशेषता देखी। आज कमाया और कल खर्च दिया। जेब मे पैसे होगे तो कल की फिक्र नही करेगे। छोटे-से-छोटे कर्मचारी भी, जिनकी तनख्वाह कम ही होती है, रुपया जमा करने की कोशिश नही करते। थोडे-से पैसे जमा हुए कि क्लब, सिनेमा, नाटक-घर, होटल आदि मे जाकर नाचगान मे और खाने-पीने मे उडा देगे। घर के नौकर-चाकर भी हमेशा छुट्टी लेने की फिराक मे रहते है। छुट्टियो के दिनो मे बहुत लोग शहर के बाहर दूर-दूर जायगे और जो कुछ बचा हो उसे खर्च कर आवेगे। एक तरह से तो यह अच्छा है कि इन लोगो को कोई फिक्र नही और वे मौज-शौक मे अपनी जिंदगी बिता देते है। लेकिन गहराई से सोचने पर मुझे तो यह वृत्ति बहुत पसद नही आई। इसकी वजह से वे दूसरी तरह की कई चिंताओ से घिरे रहते है। नौकरी छूट गई तो क्या होगा। बीमारी मे क्या करेगे। कोई भी आकस्मिक कठिनाई आई तो उससे छुटकारा कैसे मिलेगा। ये सब प्रश्न उनके सामने हरदम बने ही रहते है। वहा बेकारी इतनी नही है, इससे समस्या इतना विकट रूप नही धारण करती है। फिर भी मै मानता हू कि कुछ अधिक काम करके और मौजशौक मे कम खर्च करके कुछ बचाने की वृत्ति रहे तो हानि की बजाय लाभ ही अधिक हो सकता है। मानसिक तनाव मे कमी आकर जिंदगी में कुछ अधिक शाति का अनु-भव हो सकता है।

वहा चीनी लोगो की काफी बस्ती है, पर अधिकतर लोग

मुसलमान है। इसलिए वहा भारत और पाकिस्तान को लेकर खीचातानी चलती है कि इडोनेशिया किसके साथ रहे। मुसलमान के नाते उसको पाकिस्तान के साथ रहना चाहिए, ऐसा वहा के एक-दो राजकीय पक्षो का जोर है, लेकिन हिंदुस्तान की अंत-र्राष्ट्रीय नीति का भी वहा अच्छा प्रभाव है और उसकी तरफ भी काफी लोग आकर्षित है।

सिगापुर व पैनाग—जर्काता से हम सोराविया शक्कर का का कारखाना देखने जाना चाहते थे। लेकिन हम पहुचे उन दिनो छुट्टिया थी, इस कारण हम लोगो को हवाई जहाज मे जगह नही मिली और वहा नही जा सके। वहा से अपने कार्यक्रम के दो रोज पहले ही सिगापुर पहुच गये। चूकि दो दिन पहले सिगापुर पहुचे, इसलिए वहा से पैनाग घूम आये। पैनाग मलाया के दक्षिण मे बडा ही सुदर बदरगाह है। वहाकी जलवायु स्वाथ्य के लिए बडी अच्छी है। शहर मे ही एक ऊची पहाडी है जिसपर करीब तीन हजार फुट ऊचे रस्सी के रास्ते (रोप-वे) से जाना होता है। कोई २५ मिनट मे पहाडी की चोटी पर पहुच जाते है। वहा से सारे शहर की सुदरता अच्छी तरह से दिखाई देती है।

सिगापुर वापस आकर दूसरे रोज सुबह हम लोगो ने पी० एड० ओ० कम्पनी का नया जहाज 'चूसान' पकडा। यह जहाज करीब २२ हजार टन का था। जहाज की बनावट बहुत ही सुदर और व्यवस्था कुछ कडी, लेकिन अच्छी थी। हम लोगो को सौभाग्य से बहुत अच्छा कमरा मिल गया और पढने की मेज पर से तथा सोने के बिस्तर से भी समुद्र बहुत अच्छी तरह दिखाई देता था। खाने का कमरा बडा, सुदर और सजा हुआ

था। रहने और खाने के कमरे एयर कडिशन किये हुए थे। खाने-पीने की इफरात थी। हम लोग शाकाहारी थे, फिर भी खाने मे हम लोगो को किसी तरह की कोई दिक्कत नही हुई। दिन भर खेल-कूद, तालाब मे तैरने और डेक पर टेनिस आदि खेलने मे समय कब बीत जाता था इसका पता ही नही चलता था। खाने के कमरे मे जो परोसनेवाले थे वे विशेष रूप से ध्यान आकर्षित करते थे। देखने मे बहुत तेज-तर्रार और बडे कार्यकुशल थे। उनके कपडे भी बहुत चुस्त और अच्छे लगते थे। १२ अप्रैल को हम लोग सिंगापुर से रवाना हुए थे। हागकाग होते हुए २३ तारीख को जापान के बदरगाह याकोहामा पहुचे। हागकाग मे हमारा जहाज दो दिन के लिए रुका था।

हागकाग—हागकाग का इतिहास ही ऐसा है जिससे इस स्थान का व्यापारिक महत्व प्रतिपादित होता है। इसकी भौगोलिक स्थिति ने इसे विशेष महत्व का नगर बना दिया है। वास्तव मे इसकी ख्याति १८३९-४२ के 'अफीम-युद्ध' के बाद बढी है। उस युद्ध मे यह बदरगाह उजाड-सा था, पर अग्रेजो ने उसे अपने व्यापारिक जहाजो का अड्डा बनाकर विकसित करना शुरू किया। पहले यह चीन के कब्जे मे था, पर १८४२ की नानकिन-सधि के अनुसार यह अग्रेजो के कब्जे मे आगया। ५ अप्रैल १८४३ से यह ब्रिटिश उपनिवेश का एक भाग बन गया। पहले यहा मुख्यत अफीम का व्यापार चलता था, पर १८६९ मे स्वेज नहर खुल जाने के कारण यूरोप के जहाज यहा भाति-भाति की व्यापारिक चीजे लाने लगे। १८६० से १८७० तक यहा गत दस वर्षो से दूना माल आया और अगले दस वर्षो मे वह चौगुना होगया,

कौलून का द्वीप भी अग्रेजो को १८६० मे मिल गया। उसके भी हागकाग के अतर्गत आ जाने से इस नगर का महत्व और भी बढ गया। बाद मे तो ब्रिटेन ने चीन के मीरखाडी और गहरी-खाडी तथा लानताओ का टापू ९९ वर्ष के पट्टे पर लेकर लग-भग आसपास का सारा इलाका हागकाग मे मिला लिया। इस प्रकार जहा हागकाग का क्षेत्रफल पहले केवल ३२ मील था वहा १८९८ मे इसका विस्तार ३९१ वर्गमील होगया। अग्रेजो की साम्राज्य-लिप्सा और उनके व्यापार-प्रसार के प्रयत्नो का हागकाग एक जीता-जागता उदाहरण है।

जो हो, हागकाग नगर की आबादी इस समय १५ लाख से ऊपर है। गत युद्ध मे जापान का अधिकार हो जाने पर यहा की जन-सख्या केवल ७॥ लाख रह गई थी, पर बाद मे अग्रेजो का कब्जा फिर हो जाने पर आबादी तेजी से बढी। बडी सख्या मे चीनी वहा आगये और इस समय तो बबई, कलकत्ते की तरह वहा भी रहने तथा व्यापार के लिए खाली मकान मिलना एक बडी समस्या होगई है।

यहा की बस्तीप चमेल है। अधिकाश जन-सख्या तो चीनियो की ही है। अग्रेज तो यहा एक प्रतिशत से भी कम होगे। कुछ पोर्चुगीज, भारतीय और अमेरिकन भी है। इस बडी आबादी में से पौन लाख से एक लाख तक लोग तो पानी पर तैरनेवाले घरो में रहते हैं, जो इच्छानुसार एक स्थान से दूसरे स्थान को ले जाये जा सकते है।

हागकाग मे बदरगाह से लेकर भीतरी भाग, बाजार, हाट तक देखने की बहुत चीजे है। शहर के बीच मे ही एक सुदर

पहाडी है। जिन यात्रियो के पास समय अधिक नही होता वे मोटर से या रोप-वे द्वारा विक्टोरिया पीक पर जाकर वहा से सारे शहर का दृश्य आसानी से देख सकते है। मोटर का रास्ता लबा तो पडता है पर है एकदम पक्का और सुदर बना हुआ। यहा नावो की सर्विस सराहनीय है। हागकाग और कौलून के बीच "वालावाला" या वाटर-टैक्सियो की भरमार है। बहुत वडी-वडी मोटरवोट, जो एक बार मे ५०० से ७०० यात्रियो को ले जाती है, हर पाच-सात मिनिट के अतर से वडी तत्परता से विना जरा भी समय खोए नियमित आती-जाती रहती है। यात्रियो का इतना आवागमन रहता है और बोट इतनी जल्दी-जल्दी छूटती है कि यात्रियो को करीब-करीब दौडते हुए ही बोट पकडनी पडती है। शहर की मुख्य सडको की सैर तो मोटर द्वारा सिर्फ डेढ घटे मे ही पूरी हो सकती है। वदरगाह से पहाडी की आखरी वस्ती तक यह नगर आइने की तरह साफ नजर आता है। सवसे ऊची पहाडी पर सरकारी इमारते और वडे-वडे व्यापारिक पेढियो के सचालको के वगले है और निम्न स्तर पर वाजार तथा मजदूरो के अनगिनत छोटे-छोटे घर है। यहा का टाइगर-वाम-गार्डन और उसमे स्थित पगोडा दर्शनीय है।

हागकाग एक खुला वदरगाह है। यहा किसी वस्तु पर टैक्स आदि न होने से अमेरिका और यूरोप की चीजे वहुत सस्ते दामो मे मिल जाती है। यात्रियो के लिए वहाका विशेप आकर्पण अलग-अलग तरह के सामानो की खरीदी है।

हागकाग की काठ की वनी हुई अलमारिया व सदूक प्रसिद्ध है। काठ के ऊपर सुदर, गहराई तक खुदाई का काम किया रहता है। भीतर कपूर की लकडी लगी रहने के कारण कपूर की सुगध वरावर आती रहती है और इसके अदर गरम कपडे रख देने से उनमे कीडे नही लगते। कई वर्षो तक इनमे कुछ खराबी नही आती। दाम भी अधिक नही होते। हम लोगो ने भी वहा से एक सदूक व एक अलमारी खरीदी।

: ३ :

जापान की राजधानी में

योकोहामा बदरगाह पर उतरकर मोटर से जब हम लोग टोकियो पहुचे तो वहा की ऊची-ऊची इमारतो को देखकर बडा ताज्जुब हुआ। हम लोगो ने सुन रखा था कि जापान मे बार-बार भूकप आने की वजह से मकान छोटे और लकडी के बनाये जाते है, लेकिन हमने देखा कि वहा सात-सात, आठ-आठ मजिलो की इमारते तो सैकडो की सख्या मे थी। यह मालूम हुआ कि इमारतो पर भूकप का कोई असर न पडे, इस तरीके से पत्थर के वडे मकान बनाने का तरीका यहावालो ने खोज लिया है।

टोकियो आज, दुनिया मे आबादी की दृष्टि से, तीसरे नबर का शहर है। सबसे बडा लदन, फिर न्यूयार्क। टोकियो न्यूयार्क से बराबरी करने की कोशिश कर रहा है और सभवत उससे आगे भी बढ सकता है।

टोकियो जाते ही सबसे पहली चीजे जो लोगो को आकर्पित करती है वे है वहा के वस्तु-भडार (डिपार्टमेंट स्टोर)। टोकियो मे करीब सात-आठ बडे-बडे स्टोर है। सबसे बडे डिपार्टमेंट स्टोर मे करीब बारहसौ लडकिया व अन्य कर्मचारी काम करते है। वह स्टोर करीब सात-आठ मजिल की बहुत बडी इमारत मे है, जहा छोटी-से छोटी चीजो से लेकर बडी-से-बडी चीजे मिल जाती है। अदर ही रेस्तरा है, मजे से खाना खाइए या नाश्ता कीजिए। फोटो स्टूडियो के अलावा बडे-से-बडे मडप भी है। वहा शादिया,

सभा, जलसे आदि भी बराबर हुआ करते है। बीच-बीच मे बडी-बडी प्रदर्शिनिया भी होती रहती है। स्टोर की छत पर बच्चो के लिए खास व्यवस्था होती है। जानवरो का छोटा 'जू' होता है, 'मेरी गो राउड', बिजली से चलनेवाली रेले, आदि बच्चो के लायक अन्य खेल-कूद की सामग्री रहती है। बच्चो को ऊपर छोडकर माता-पिता स्टोर के अदर अपनी खरीदी आसानी से कर सकते है। आने-जाने के लिए बडे-बडे लिफ्ट और एस्कलेटर (चलती सीढिया) लगी होती है।

हरेक डिपार्टमेट स्टोर गर्मियो मे एयर-कडिशन होता है और सर्दियो मे गरम हवा की मदद से गरम रहता है। अदर की हवा ताजी, साफ व शुद्ध रखने का भी बराबर इतजाम रहता है।

टोकियो के एक बडे डिपार्टमेट स्टोर के, जिसका नाम डायामारू है, कुछ आकडे नमूने के तौर पर यहा देता हू, जिससे इसके कार्य की विशालता का कुछ अदाज पाठको को मिल सकता है।

इसकी पूजी ७३,००,००० रु० है और अपने शेयर होल्डरो को साधारणत कोई २० प्रतिशत डिविडेड हर साल देता है। इसकी मासिक बिक्री १५० करोड रुपये के लगभग हो जाती है। सिर्फ टोकियो के सारे डिपार्टमेट स्टोर्स की रोज की औसत बिक्री करीब २ करोड २५ लाख रुपयो की है।

जापान मे आम तौर से चीजो के दाम निश्चित रहते है। मोल-भाव करने का वहा रिवाज नही है। छोटी दुकानो मे कभी आठ-दस प्रतिशत भाव कम हो भी सकता है, लेकिन बडी दुकानो मे व डिपार्टमेट स्टोर मे तो मोल-भाव होता ही नही। हर चीज पर उसका दाम लिखा रहता है। स्टोर सदा लोगो मे भरा रहता

है। जैसे अपने यहा प्रदर्शिनियो मे लोग जाते है उसी तरह से जिनको कुछ खास खरीदना न हो, वे शौकिया भी डिपार्टमेट स्टोर्स मे समय बिताने चले जाते है। आप बिना रोक-टोक के मजे से चारो तरफ घूमिए। चीजो का दाम देखते रहिए और जो चीज पसद आवे उसके लिए पास खडी लडकी को बुलाकर कह दीजिए तो वह आपको तुरत वह चीज बहुत अच्छी तरह से डब्बे मे बाधकर दे देगी। आपका सामान अधिक हो तो आप उसीके पास छोड दीजिए। वह उसे नीचे भेज देगी, जहा से जाते समय आप लेजा सकते है। यदि आप चाहे तो सामान आपके घर पर या होटल मे भी पहुचाने की व्यवस्था कर दी जाती है। छोटी-से-छोटी चीज को जिस सुदरता से डब्बे या कागज मे बाधकर दिया जाता है, वह देखने व अनुकरण करने-जैसी चीज है।

हमलोग खरीदारी को निकले। हमे चीजो की कीमत वाजिव है या नही, इसका पता नही था। हागकाग के अनुभव के वाद इसका भी भरोसा नही था कि वहा भाव पूर्व-निर्धारित रहते है या नही। इससे जानकारी करने के लिए हमने दो-चार दुकानो मे चीजे पसद करके उनके दाम कम कराने की कोशिश की। दुकानदारो को इससे वडा ताज्जुव हुआ। वे भाव-ताव के आदी नही थे। या तो साफ ना कह देते या हम कुछ थोडा-वहुत ही कम करने को कहते तो उसे विना विवाद के मान लेते।

एक वार घूमते-घामते एक छोटी-सी खिलौने की दुकान देखकर हम आकर्षित हुए और उसमे घुस गये। कुछ चीजे पसद की और देने को कहा तो वह देने से इन्कार करने लगा। भापा

की दिक्कत थी ही। बाद मे पता चला कि वह थोक बिक्री की दुकान है, खुदरा सामान नही बिकता। लेकिन हमे तो कई चीजे इतनी पसद आई और उनके दाम इतने सस्ते लगे कि विमला कहने लगी कि हमे तो ये चीजे लेनी ही है। उनको बताने लगी कि यह भी दे दो और वह भी दे दो। बच्चो के लिए खिलौने सचमुच सुदर और सस्ते थे। काफी बढे आकार के रेल के इजन, मोटर आदि चार-चार, पाच-पाच रुपये मे मिल रहे थे। हमने कहा कि हम भारत से आये है, अगर दे सके तो कृपया दे दे, तो दुकानदार का दिल पसीजा और उसने कहा—"अच्छा, ले लो।" भाव तो वही थोक-बिक्री के लिए जो लिखे हुए थे, उसमे फेरफार करने का विचार हो उसके मन मे नही आया।

बस, उसका इशारा होते ही विमला शिकारी की तरह चीजो पर टूट पडी। बडे-बडे तीन-चार पार्सल होगये। उन्होने कहा कि हम खुद ठीक से बाधकर इन्हे आपके होटल मे पहुचा देगे। सारी चीजो का बिल कुल मिलाकर करीब १५०) रुपये ही हुआ।

जापान अपने उपयोग की करीब-करीब सारी चीजे अपने-आप बना लेता है। आम जरूरत की चीजो मे बडी मोटर गाडिया और अच्छे फाउटेनपेन के अलावा करीब-करीब सभी चीजे वे खुद बना लेते है। बडे-बडे लिफ्ट, छोटी मोटरें, मोटर बसे, स्कूटर, ट्रक्स, एस्कलेटर, इजन, ट्रेन आदि चीजे तो बनाते ही है, लेकिन बडे-बडे समुदरी जहाज भी न केवल अपने लिए बल्कि विदेशो के लिए भी बनाते है। कुछ यूरोप और दक्षिण अमेरिका मे भी ये जहाज़ निर्यात होते है।

घडिया भी यहा बहुत अच्छी बनने लगी है। देखने मे काफी सुदर होती है। चलने मे कितनी मजबूत होगी, यह तो कुछ वर्षो के बाद ही पता चल सकता है। ये लोग घडिया स्वीजरलैड की भाति ही विकेद्रित ढग पर बनाते है। कैमरे और दूरबीन बनाने मे भी इन्होने बहुत प्रगति की है। इनके निक्कन और केनन कैमरे दुनिया के अच्छे-से-अच्छे जर्मन कैमरे कॉन्टेक्स और लायका की बराबरी करते है। भाव मे उनसे काफी सस्ते है। ये कैमरे काफी मात्रा मे वहासे निर्यात भी होते है। कैमरे और दूरबीन पर विदेशी लोगो को खरीदते समय बिक्री-कर नही देना पडता। इसलिए काफी सस्ते मिल जाते है।

जापानी लोग स्वभावत टेकनिकल मनोवृत्ति के होते है। टेकनिकल उन्नति उन्होने काफी की है और यूरोपीय देशो से बराबर टक्कर लेते रहते है। इसीसे काफी चीजे ये अमेरिका को भी बेचते है।

जापान के नकली मोती सारी दुनिया मे प्रसिद्ध है। हम लोग उस टापू पर भी गये, जहा ये मोती निकाले जाते है। उस टापू का नाम है टोबा। नकली मोती निकालने की शुरू से आखिर तक की क्रिया हमे विस्तार से दिखाई गई। यह बहुत ही दिलचस्प है। असली मोती से यह मोती काफी अच्छा और सुदर होता है, और सस्ता तो है ही। इनपर भी विदेशियो को बिक्री-कर नही देना पडता। खास करके अमेरिका और दूसरे देशो को भी यह मोती काफी मात्रा मे निर्यात होता है।

चीनी मिट्टी के बरतन भी पर्याप्त मात्रा मे सुदर और सस्ते बनते है और उनका भी निर्यात होता है। इसके लिए बडी-बडी

फैक्टरिया है और ग्रामोद्योग ढग मे भी यह काम होता है। चीनी मिट्टी के बरतन बनाने की एक बडी फैक्टरी हमने नागोया मे देखी।

खिलौने हर तरह के, बहुत बडी तादाद मे और काफी सस्ते मिलते है, खासकर रबर के खिलौने तो बहुत बनते है। फोटो-अलबम कई तरह के और बहुत ही कम दामो मे मिल जाते है।

दुनिया मे कोई नई चीज बनी तो उसकी नकल करने मे जापानी लोग उस्ताद है। ये लोग मुझे शक्कर की रिफाइनरी दिखाने ले गये थे। वहा इसका एक अच्छा उदाहरण देखने को मिला। कुछ वर्ष पहले इन्होने 'हाई स्पीड ओटोमैटिक सेट्री-फूगल मशीन' अमेरिका से मगाई थी। उसके पास अब इन्होने जापान की बनी मशीन लगा ली है। इनका दावा है कि इसकी कार्य-क्षमता अमरीकन मशीन से ज्यादा है। अमरीकन मशीन जहा ५०० हार्स-पावर खर्च करती है वहा इनकी मशीन ४० मे ही काम चला लेती है। हर तरह की छोटी-मोटी चीजो की ये लोग नकल करते है और साथ-ही-साथ उनमे एक या दो नई चीजे भी जोड लेते है।

ये लोग बिजली का काफी उपयोग करते है। छोटे-से-छोटे गाव मे भी बिजली है। बिजली के सहारे ही छोटी-बडी बहुत-सी मशीने व कारखाने चलते है। छोटी-बडी जिस तरह की मशीन की जरूरत हो तुरत बना लेगे। छोटे-से-छोटे गाव से भी आप गुजरे तो आपको बिजली से चलती मशीने मिलेगी। शहरो मे निओन् की बत्ती मे दुकाने सजाते है और विज्ञापन भी काफी करते है। यहा के हिसाब से वहा बिजली का दाम कम नही है,

तो भी लोग व्यापारी व घरू कामो मे बिजली का खूब उपयोग करते है।

जापान मे लोगो को फोटो खीचने का बडा शौक है। बडे-बूढे, स्त्री-पुरुष और बच्चे सभी लोग अक्सर कैमरा रखते है और हर मौके पर फोटो लिया करते है। स्कूल के कई बच्चे कैमरे रखते है और खुद फोटो खीचते रहते है। जापान-जैसे छोटे-से देश मे कैमरा बनाने की कम-से-कम सात-आठ कम्पनिया होगी, जो एक-दूसरे से स्पर्धा करती रहती है। इस स्पर्धा की वजह से हर कम्पनी को अपना माल बेचने मे बडी कठिनाई का सामना करना पडता है। सब लोग मेहनत करके अपने माल को अच्छे-से-अच्छा बनाने की कोशिश करते है और सस्ते-से-सस्ता भी देते है। जहातक मेरा खयाल है इसी स्पर्धा की वजह से इनके कैमरा व दूरबीन बनाने के उद्योगो ने इतनी जल्दी इतनी प्रगति की है कि दुनिया मे ऊचे-से-ऊचे स्तर पर पहुच गये है। उन लोगो को हरदम जागरूक रहकर बराबर प्रगति करते रहना लाजमी होगया है। ऐसा वे न करें तो उनका बाजार मे टिकना ही असभव हो जायगा। माल की बहुतायत होने पर अपने-आप उसको सुधारने की तरफ ध्यान जाता है और स्पर्धा हुई तो वह जल्दी ही सुधर भी जाती है।

हमे निक्कन कैमरा बनाने का कारखाना देखने का मौका मिल गया। कारखाना सचमुच बडा अच्छा था। उनके नये-नये प्रयोग करने की व सुधार करने की प्रवृत्ति देखकर हम लोग बडे प्रभावित हुए।

: ४ :

यात्रियों के लिए सुविधाएं

जापान जाने के लिए सबमे अच्छा समय मार्च के मध्य मे मई के अत तक का है। इस समय ठड धीरे-धीरे कम होने लगती है। न ज्यादा जाडा रहता है, न ज्यादा गर्मी। शुरु मे तो कुछ गरम कपडे पहनने पडते है, लेकिन बाद मे सूती कपडो से भी काम चल जाता है। जापान का प्रसिद्ध 'चेरी ब्लोसम-सीजन' अप्रैल के पहले सप्ताह मे आता है। 'चेरी' नाम के सफेद फूलो से झाड लद जाते है। ये फूल दस से पद्रह दिन तक ही रहते है। हम लोग कुछ देर से पहुचे, इसलिए उन फूलो की बहार नही देख सके। लेकिन लोग कहते है कि यह दृश्य देखने योग्य होता है। ये झाड यहा लगे भी बहुतायत से है। कई जगह सडको के दोनो तरफ इनकी कतार लगी होती है। घरो मे और बाहर भी जब ये झाड फूलते है, तब बहुत ही सुदर दिखाई देते है। जापान की जलवायु आमतौर से ठडी है। इसलिए भी यहा थका-वट कम आती है और अधिक काम करने की ओर स्वाभाविक वृत्ति रहती है। दिनभर कितना ही काम करने पर थकावट नही होती। बर्फीले मौसम मे भी सारा जापान बडा दर्शनीय होता है। चारो तरफ समुद्र और बीच मे छोटे-बडे अनेक पहाड, पहाड भी हरियाली से भरे हुए। इनपर बडे-बडे पेड भी बहुत है। पहाडो के बीच-बीच मे छोटे-छोटे नगर बसे है, इसलिए उन

प्रदेश से जब रेल द्वारा गुजरते है तो बडा अच्छा दृश्य दिखलाई देता है। यहा प्राकृतिक नदी-नालो का पूरा उपयोग किया गया है और मेहनत करके उनको अधिक सुदर बना दिया गया है।

यहा की जलवायु अधिकतर ठडी होने से स्वास्थ्यप्रद है। काम करने मे काफी चुस्ती व स्फूर्ति रहती है। लोग आमतौर पर स्वस्थ होते है। बच्चे मोटे-ताजे रहते है। उनके गुलाबी गाल बडे प्यारे लगते है। बच्चे तृप्त रहते है, इससे रोते बहुत कम है। मुसाफिरी मे, सडको पर, मित्रो के यहा हमने इतने बच्चे देखे, फिर भी उनको रोते हुए शायद ही पाया। विमला तो कहने लगी कि यहा के बच्चो के रोने की आवाज सुनने का मन करने लगा है। देखे तो सही कि वे रोते कैसे है! लोगो के स्वास्थ्य पर, खास करके लडाई के बाद, यहाकी सरकार विशेष ध्यान देने लगी है। अब यहा भी मृत्यु का अनुपात बहुत कम हो गया है और करीब-करीब अमरीका और इग्लैड के बराबर आ गया है।

जापान मे रेलवे का इतजाम बडा व्यवस्थित और अनुकरणीय है। जापान नेशनल रेलवे यहाकी मुख्य सरकारी कम्पनी है, जिसकी रेले देश मे फैली हुई है। उसकी लाइनो की कुल लबाई १२,४३२ मील है। सरकारी व गैर-सरकारी सारी लाइने मिलाकर कुल लबाई ३४,००० किलोमीटर यानी करीब २१,६२५ मील हो जाती है।

बडी लाइने सरकारी होती है, छोटी-छोटी लाइने लोगो की व्यक्तिगत। व्यक्तिगत लाइने सरकारी स्टेशन से जुडी रहती है। दोनो के प्लेटफार्म आदि एक ही होते है। गाडिया ठीक

समय पर चलती है और बडे शहरो मे ६०-७० मील के अदर कही भी जाना हो तो हर १५-२० मिनट के भीतर गाडिया मिल जाती है। सारे जापान मे मीटर गेज होने पर भी गाडिया ५०-६० मील की रफ्तार से चलती है। आम तौर पर सब लोग तीसरे दर्जे मे ही घूमते है, क्योकि तीसरे दर्जे की सीटे काफी आराम-देह बनी है। दूर के सफर के लिए दूसरे दर्जे का उपयोग होता है। रात को सोने के डब्बे अलग से जुड जाते है। तीसरे दर्जे का किराया काफी सस्ता होता है। थोडे फासले के लिए तेज गाडियो मे जाने का भाडा बहुत ज्यादा होने के कारण साधारणत लोग धीमी गाडियो से जाते है। इससे लबे सफर कीगाडियो मे भीड अपने-आप कम हो जाती है।

आप यदि तेज व धीमी गाडियो के भाडे को ध्यान से देखे तो आपको पता चलेगा कि उनमे कितना अतर है।

गाड़ी का नाम	**दूरी**	**तीसरा दर्जा**	**दूसरा दर्जा**	**पहला दर्जा**
		रु०आ०पा०	रु०आ०पा०	रु०आ०पा०
लिमिटेड एक्सप्रेस[1]	३७५मील तक	८- ०-०	१६- २-०	२८-१२-०
लिमिटेड एक्सप्रेस	७५० ,,	१३- ४-०	३२- ०-०	४८- ०-०
साधारण एक्सप्रेस	३७५ ,,	४- ०-०	६- ६-०	१४- ६-०
साधारण एक्सप्रेस	७५० ,,	६-१०-०	१६- ०-०	२४- ०-०
धीमी एक्सप्रेस	३७५ ,,	२- ०-०	४-१२-६	७- ३-०
धीमी एक्सप्रेस	५६२मील के ऊपर	३- ५-०	८- ०-०	१२- ०-०

१ यह सबसे तेज चलनेवाली गाडी है, जो कुछ ही स्टेशनो पर रुकती है।

इससे आप देखेगे कि ७५० मील तक के प्रवास मे धीमी एक्सप्रेस व लिमिटेड एक्सप्रेस के भाडे मे करीब-करीब चौगुना फर्क है। पहले दर्जे के लिए उतनी ही दूर के लिए धीमी एक्सप्रेस से जहा १२ रुपए लगते है, वही लिमिटेड एक्सप्रेस से ४८ रुपये लगते है। तीसरे दर्जे मे ३-५-० की जगह १३-४-० लगते है।

हर प्लेटफार्म पर, कितने बजे किस-किस जगह के लिए गाडिया जायगी, लिखा रहता है। स्टेशन के ऊपर उस स्टेशन का नाम और अगले व पिछले स्टेशन के नाम भी लिखे रहते है। दूसरे दर्जे का डब्बा कहा खडा रहेगा, उसकी निश्चित जगह होती है। कुली कही बहुत कम होते है और कही बिल्कुल ही नही होते। इसलिए अधिक सामान लेकर वहा कोई नही घूमता। हर स्टेशन पर सामान रखने का कमरा होता है, जहा अपना सामान रखकर आराम से घूमिए। हर स्टेशन पर भाडा कम या अधिक दिया हो तो उसके ठीक करने का दफ्तर रहता है। यदि भाडा अधिक दिया हो तो तुरत वापस मिल जाता है। यदि कम दिया हो तो वहा फर्क देने से वाहर जाने की इजाजत मिल जाती है। यदि किसी वजह से आप जहा से सफर करते हो वहा टिकट नही ले सके तो उतरने के स्टेशन पर आप कह दीजिए कि हम फला स्टेशन से आये है। भाडा लेकर आपको विना हिचकिचाहट के वाहर जाने दिया जायगा।

एक वार हम लोगो ने गलती से एक-एक की जगह दो-दो टिकट ले लिये। नियम यह है कि गलती से अधिक टिकट ले ले तो उतरनेवाले स्टेशन के वाहर जाने से पहले ही अधिक दिये

हुए पैसे वापस ले ले। लेकिन हमको स्टेशन के बाहर जाने पर पता चला कि अधिक टिकटे भूल से ले ली गई है। इसलिए हम फिर स्टेशन पर आये। हम लोगो ने बाहर जाते समय वहा के टिकट जमा करनेवाले से यह सर्टिफिकेट भी नही लिया था कि हमने उन दो टिकटो का उपयोग नही किया है। ऐसी हालत मे स्वाभाविक रूप से उन टिकटो पर रुपया वापस करना बडी मुश्किल बात थी। लेकिन जब हमने अपनी बात वहा के अफसर को बताई तो उसने कहा—मै कोशिश करके देखता हू। उसमे थोडा समय लगने का डर था, इसलिए उसने कहा—अभी तो आप जाइए, यदि पैसे वापस मिले तो मै फोन करके आपको इत्तिला कर दूगा। उस समय जो टिकट जमा करनेवाला था वह भी चला गया था। वह बेचारा खोजता-खाजता उसके पास पहुचा, उससे सर्टिफिकेट लिया और पैसे वापस लेकर हम लोगो के होटल पर जोकि वहा से पास ही था, पैसा देने खुद ही चला आया। यात्रियो की सुख-सुविधा का कितना ध्यान रखते है! उसको इतनी दिक्कत उठाने की कोई आवश्यकता नही थी। उसके किसी बडे अधिकारी ने उसे ऐसा करने का हुक्म नही दिया था, लेकिन उसने अपना फर्ज समझकर ही यह काम किया। उसमे टालने की भावना के बजाय लोगो को सचमुच मदद पहुचाने की भावना की प्रधानता थी। इसका यात्रियो पर बहुत अच्छा असर पडना स्वाभाविक ही है।

टोकियो मे जमीन के नीचे भी रेले चलती है। साधारणत सारे डिब्बे एक-दूसरे मे जुडे रहते है और चलती गाडी मे भी हम एक डिब्बे से दूसरे डिब्बे मे जा सकते है। दूर की

मुसाफिरीवाली गाडियो मे रेल की तरफ से ही तरह-तरह की खाने-पीने की चीजे बिकती रहती है। जो कडक्टर होता है वही टिकट भी चैक करता है, और साथ ही गाडी मे बराबर हर पद्रह-बीस मिनट बाद झाडू भी लगाता रहता है, जिससे डब्बे एकदम साफ रहते है। कोई भी आदमी बडा-छोटा काम करने मे हिच-किचाहट नही करता। 'मै अफसर हू और यह काम छोटा है, इसके करने मे मेरी प्रतिष्ठा को धक्का पहुचेगा' आदि व्यर्थ की भावना उनमे नही है। एक स्टेशन पर कुछ सामान अधिक था और कुली नही था तो टिकट कलेक्टर खुद हमारा सामन स्टेशन के बाहर ले गया और जब हम उसे कुछ देने लगेतो उसने लिया ही नही। इनाम आदि लेने का न रिवाज है, न कोई अपेक्षा रखता है। होटलो मे जो बिल रहता है उस पर १० प्रतिशत आमतौर पर टिप के लिए जुडा रहता है। उसके अलावा को कुछ नही देता। टैक्सी आदि मे भी टिप देने का रिवाज कही नही है।

हर जगह पर, चाहे जगह छोटी हो या बडी, यदि वहा विदेशी यात्रियो के जाने की सभावना हो और उनके लिए कोई दर्शनीय वस्तु हो तो, वहा अच्छे-से-अच्छा पाश्चात्य ढग का होटल जरूर होगा। यात्रियो से उनको काफी फायदा होता है, इसलिए उनकी सुख-सुविधा का पूरा इतजाम रहता है। दर्शनीय स्थानो पर पहुचने और उनको अच्छी तरह से दिखाने के लिए बहुत खर्च करके भी अच्छा इतजाम करते है। यदि जमीन के भीतर जाकर कोई जगह अच्छी तरह से देखना चाहे तो खूब गहराई तक जानेवाले लिफ्ट लगे होगे। हर तालाब आदि मे

तेज रफ्तार से जानेवाली मोटरवोट होगी। जहा भी जाना चाह वही के लिए जगह-जगह से बसे मिल जाती है।

यात्रियो से भी उनको काफी श्राय होती है। यात्रियो के लिए हर जगह पहुचने का, श्रच्छे-से-श्रच्छे रहने के स्थान का व गाइड श्रादि का समुचित प्रबध है। हर जगह जाने के बारे मे यात्रियो के लिए विस्तृत साहित्य उपलब्ध रहता है। जापान की 'टेवलब्यूरो' नाम की सस्था घूमने श्रादि की पूरी व्यवस्था कर देती है। यात्रियो को जिस स्थान मे दिलचस्पी हो वहा जाने-कार्यक्रम, टिकटे, देखने योग्य स्थान, होटल, गाइड श्रादि का प्रबध वे श्रपने दफ्तर मे बैठे-बैठे सारे जापान के लिए कर सकते है।

कार्यक्रम बनाते समय इस बात का जरूर खयाल रखना चाहिए कि उसमे मौका पडने पर कुछ फेरफार करने की गुजाइश रहे। घूमते समय एक बगाली महाशय भी दो-चार जगह हमारे साथ थे। इससे उनसे श्रच्छा परिचय होगया। उन्होने टोकियो से रवाना होने से सारी जगह घूमने का करीब एक माह का कार्यक्रम जापान के ट्रेवलब्यूरो से बनवाकर सब जगह की रेल का रिजर्वेशन, होटल मे ठहरने की व्यवस्था श्रादि पहले ही करवा ली थी। इससे उनके मन को सतोष रहा होगा, लेकिन उन्हे बडी तकलीफ भी रही। कही एक दिन की गडबडी हो जाती तो सारा कार्यक्रम बिगड जाने का डर हमेशा बना रहता। बीमार होगये या गाडी चूक गई तो श्राफत। कही एक-दो दिन कम-ज्यादा रहने का मन होगया या कार्यक्रम मे कुछ फर्क करने की इच्छा होगई तो श्रसभव हो जाता है। बनर्जी महोदय का बीच मे मन होगया कि हमारे साथ कुछ श्रौर घूमे श्रौर हमारे कार्यक्रम के

अनुसार चले, क्योकि वह अधिक सुविधाजनक था। इस प्रकार उन्हे साथ भी मिल जाता। पर उन्होने तो पहले से ही अपने-आपको इस तरह बाध लिया था कि उसमे जरा भी फेरफार करने की गुजाइश नही रही थी।

: ५ :

जापानियों की विशेषताएं

जापानी लोग साधारणत काफी ईमानदार होते है। वहा चोरी वगेरा वहुत ही कम होती हे। छोटी-मोटी चोरी हो भी गई तो वहाकी पुलिस वडी सतर्कता और मेहनत मे काम करती है और चोरी का माल असली मालिक के पास जल्द-मे-जल्द पहुच जाय इसके लिए हमेशा प्रयत्नशील रहती है। हम लोग वहा थे, उन्ही दिनो की एक घटना हे। किसी लडके ने एक कैमरा चुरा लिया। कैमरा के विदेशी मालिक ने सोचा कि रेल मे चोरी होगया हे, सो उसका क्या पता चलेगा? इसलिए उसने पुलिस मे रिपोर्ट भी नही की। इस वीच पुलिस ने चोर को पकडकर कैमरा वरामद कर लिया। चूकि, उनके पास कोई रिपोर्ट नही आई थी, इसलिए कैमरा असली मालिक के पास कैसे पहुचे, यह समस्या उनके सामने थी। सयोग से कैमरा मे फिल्म लगी हुई थी। उन्होने उसको धुलवाया और चोर से पूछा कि उन तस्वीरो मे कैमरा के मालिक की तसवीर भी है क्या? चोर ने एक फोटो मे कैमरा के मालिक को पहचान लिया। पुलिसवालो ने वह फोटो अख-वारो मे छपवाया और मालिक की तसवीर के चारो तरफ गोल घेरा डालकर नीचे लिखा कि यह कैमरा जिस व्यक्ति का हो, वह आकर पुलिस-दफ्तर से ले जाय। इसी तरह, एक विदेशी महिला की घडी रेल मे खो गई थी। उसने पुलिस मे रिपोर्ट की। पुलिस का आदमी रेलवे मे पूछताछ करने गया तो रास्ते

मे ही रेल का आदमी घडी लिये हुए मिला और बोला कि किसी-की यह घडी पडी मिली है, जिसकी हो उसके पास पहुचा दे।

डिपार्टमेट स्टोर या छोटी-बडी दूकानो से भी हम लोग सामान खरीदते तो उन लोगो से कह दिया करते कि भाई, यह सामान हमारे होटल मे पहुचा दे। हमारे पास रसीद आदि नही होती थी तो भी सामान बराबर होटलो मे पहुचा देते थे। न भेजनेवाले की तरफ से, न होटल के कर्मचारियो की तरफ से कभी कोई गफलत हुई।

कही बाहर दूसरे गाव जाते तो होटल के 'बेगेजरूम' (सामान रखने के कमरे) मे बिना रसीद के सामान छोड देते थे, यहातक कि स्टेशन के उपर भी सामान रखने के कमरे मे, बिना ताला लगाये, समान छोडने मे झिझक नही होती थी। हमे भरोसा होगया था कि उसमे से कोई चीज गायब नही होगी।

यहाके लोग जो बात कहते है उसको निभाते भी है। एक-दूसरे पर पूरा भरोसा रखते है। किसीकी नीयत पर शका नही करते। कोई व्यक्ति कुछ कह रहा है तो, जबतक वह गलत साबित न हो जाय, यही मानकर चलेगे वह सच ही कह रहा है।

यहाके लोगो के रहन-सहन का स्तर काफी ऊचा है। रहना, खाना-पीना बडा महगा है। पश्चिमी ढग के अच्छे होटलो मे दो आदमियो के कमरे के लिए करीब ४०-४५ रुपये सिर्फ एक दिन के देने पडते है। दोपहर के मामूली खाने के ६-७ रुपये, और रात के खाने के ६-१० रुपये प्रति व्यक्ति अलग से लग जाते है। टैक्सी का भाडा कम-से-कम एक रुपये से शुरु होता है। यदि पश्चिमी ढग का शाकाहारी खाना चाहिए तो टोकियो के अलावा

और मामूली शहरो मे भी होटल और खाने-पीने की सामग्री इतनी ही महगी होती है। जापानी होटलो मे उनके ढग का खाना खाया जाय तो जरूर बहुत सस्ता होता है, पर विदेशियो को इन होटलो मे रहने मे दो-तीन तरह की कठिनाइया होती है। सबसे पहले तो यहा अग्रेजी जाननेवाला कोई मुश्किल से मिलता है। दूसरे, शाकाहारी खाना भी ठीक से नही मिलता। तीसरे, जापानी रिवाज के अनुसार वहा नहान-घर अलग-अलग नही होते है। स्त्री-पुरुष सब एक ही नहान-घर में सग-सग नहाते है। यह चीज हम लोगो के लिए अजीब थी और इस तरह से स्नान करना सभव नही था। यद्यपि यहाके लोगो के लिए एकदम स्वाभाविक बात है।

यहाके लोग सफाई का बहुत ध्यान रखते है। होटल हो या खुद का मकान, दिनभर झाड-पोछ करते ही रहेगे। जापानी घरो मे जाय तो भारतीयो के समान ही घर मे घुसते समय जूते खोल देने पडते है। घर मे इस्तेमाल करने के लिए एक खास तरह के कपडे की चप्पल होती है। कमरो के भीतर पहनने के लिए अलग चप्पल होगी। पैर साफ हो तो नगे पैर भी रह सकते है। कमरो मे सभी जगह लकडी के फर्श पर चटाइया बिछी रहती है और उनके कोनो पर कीले ठुकी रहती है। चटाइया एकदम साफ रहती है। असली जापानी घर मे मेज-कुर्सी नही होती। खाना खाने के लिए एक चौकी होती है। पलथी मार-कर खाने बैठते है और चौकी पर लकडी की तश्तरिया रखकर 'चाप स्टिक्स (दो लकडियो) से खाते है। सोने के लिए पलग नही होता, बल्कि एक-के-ऊपर-एक पाच-छ गादिया रखकर उनपर

आराम से सोते है ।

रहने का मकान आमतौर पर छोटा और लकडी का बना होता है। चोरी का विशेष डर न होने से उनको बहुत मजबूत बनाने की फिक्र नही रहती। मकान काफी सस्ता बन जाता है। पहनने के कपडे भी साफ-सुथरे होते है। पुरुष तो आमतौर पर पश्चिमी लिबास पहनने लगे है। जापानी स्त्रियो के लिबास को 'किमोनो' कहते है। उसको पहनना बडा मुश्किल होता है, देर भी बहुत लगती है और पहनने मे दूसरे की मदद की भी जरूरत पडती है। उसे पहनकर तेजी से चला नही जा सकता और काम करने मे भी असुविधा होती है, इसलिए सुविधा की दृष्टि से भी उनको अपना पहनावा बदलने की आवश्यकता हुई। किमोनो देखने मे काफी सुदर लगता है और जापानी स्त्रिया पश्चिमी कपडो की नकल करे, यह भी अच्छा नही लगता। फिर भी मेरी समझ मे पश्चिमी लिबास उनके लिए आवश्यक चीज होगई है। वैसे भारतीय साडी और किमोनो मे तुलना की जाय तो साडी किमोनो से अधिक सुदर व सुविधाजनक पहनावा है, इसमे कोई शक नही ।

वहाकी लडकिया साडी पसद करती है, लेकिन साडी पहनी हुई स्त्रियो को देखने की वे अभ्यस्त थी, ऐसा नही लगा। इसलिए डिपार्टमेट स्टोर, सडक, नाटक-घर, दावत आदि सार्व-जनिक स्थानो मे जापानी लोग, और लडकिया तो खासकर, मेरी पत्नी की ओर ताकने लगती थी और उसकी साडी को बडी कौतूहल भरी नजर से देखती थी। लडकिया कानाफूसी करने लगती और कभी-कभी हँसने भी लगती। मित्रता भी करना

चाहती। उनके चेहरे से यह लगता कि उनको यह लिबास पसद आ रहा है। जिन व्यक्तियो से हमारी जान-पहचान हो जाती, वे तो साफ तौर से अपनी राय जाहिर कर देते कि उनको साडी का पहनावा बडा अच्छा लगता है।

सामान्यतया जापानी स्त्रिया पुरुषो के साथ पार्टी या दावत मे नही जाती। जो स्त्रिया काम-काज करती है, वे अपने काम के लिए बाहर जाती है, लेकिन वैसे स्त्रिया अधिकतर घरो ही मे रहती है। घर के सारे काम-काज खुद सम्भालती है। बडे घरो की स्त्रिया भी अधिकतर काम अपने हाथ से करती है। घर मे पुरुष की बहुत इज्जत है। जापान अभी तक पुरुषो का ही देश माना जाता है। अब स्त्रिया कुछ-कुछ अपना सिर उठा रही है और उनको धीरे-धीरे राजनैतिक और सामाजिक अधिकार मिल रहे है। जब पुरुष बाहर से आता है तो स्त्रिया बडी आव-भगत से उसका स्वागत करती है। उसके जूते निकालकर चप्पल पहनाती है, तथा कोट आदि खोलने मे मदद करती है। पुरुष देर से आया, तो कहा गए थे या देर क्यो हुई, इस तरह के फिजूल के प्रश्न पूछने का रिवाज वहा नही है। पति-भक्ति काफी है, लेकिन अब पाश्चात्य सभ्यता का कुछ-कुछ रग वहा भी चढ रहा है। वैसे यह प्रसिद्ध है कि चीनी रसोइया हो और जापानी पत्नी, तो घर की व्यवस्था बडी सुदर रह सकती है। एक अमरीकन मित्र से बात हो रही थी। उसने कहा कि जापानी स्त्रिया घर-गृहस्थी और आज्ञाकारिता की दृष्टि मे बडी अच्छी है। लेकिन, उनका बौद्धिक विकास कम ही हुआ है, क्योकि उनको अभी तक बाहर जाने की आजादी और समाज मे लोगो से

मिलने की सुविधा नही मिली है। आमतौर से स्त्री-पुरुष जब आपस मे मिलते है तो दोनो नम्रता से काफी झुककर एक-दूसरे का अभिवादन करते है।

जापानियो को फूलो से बेहद प्रेम है। कहते है, फूलो की सजावट का रिवाज भगवान बुद्ध की पूजा करते हुए शुरू हुआ, लेकिन अब तो यह रिवाज जापान के लोगो की आधुनिक आदतो मे शामिल होगया है। घर, दफ्तर, होटल, आदि कोई जगह ऐसी नही मिलेगी जहा फूल न दीखे। टैक्सी, बस आदि मे भी लोग शौक से फूल सजा लेते है। उन्हे सजाने की विशेष कला है, जिसके शिक्षण के लिए बराबर वर्ग चलते है। शादी के लायक उम्रवाली लडकियो के लिए इस कला का जानना एक वडी जरूरी वात मानी जाती है। सजावट मे फूलो के साथ-ही-साथ घास, पत्ते, वास की डालियो और टहनियो का भी समावेश होता है। विशेष मेहनत करके खास तरीके से पेड तैयार किये जाते है। जो ऊचाई मे वहुत छोटे रह जाते है। ऐसे पेडो को वडे-वडे हाल, खाने के कमरे आदि स्थानो मे सजाकर रखते है।

खाने-पीने मे शाकाहार-जैसी वस्तु यहाके लोग समझते ही नही। चावल, मछली और अन्य तरह के मास उनके खास खाद्य-पदार्थ है। खाने मे ये लोग हमारे-जैसे भाति-भाति के पकवान नही बनाते। जापानी घरो या होटलो मे शाकाहारी भोजन से पेट भरना मुश्किल हो जाता है। अग्रेजी ढंग के होटलो मे अग्रेजी ढग का शाकाहारी भोजन अलबत्ता मिल जाता है। जापानी ढग का खाना वडा सादा होता है। वे चावल खूव खाते है, पर खाते कोरा ही है। सब्जी, मास, मछली आदि वीच-

बीच मे खाते जाते है। चावल मे हमारे यहाकी तरह दाल, कढी या दही आदि मिलाकर नही खाते है।

खाने मे 'टेमपूरा' उनका एक विशेष पकवान होता है। उसकी तारीफ सुनकर खाने की बडी इच्छा हुई। लेकिन जब कहा गया कि इसमे मछली होती है, तो हमें बडी निराशा हुई। फिर किसीने कहा कि खास व्यवस्था करके शाकाहारी 'टेमपूरा' भी बनाया जा सकता है। तब एक जापानी मित्र ने हमलोगो को खास शाकाहारी 'टेमपूरा' खिलाने के लिए अपने एक मित्र के यहा व्यवस्था की और हम बडी आतुरता के साथ 'टेमपूरा' खाने पहुचे। जब वह हमे परोसा गया और हमने खाकर देखा तब तो हमे निराशा ही हुई; क्योकि वह हमारे यहा करीब-करीब सभी घरो मे बहुत आसानी से बननेवाली बैगन और आलू की पकोडिया थी। हर बडे होटल मे एक अलग कमरा होता है, जहा सिर्फ 'टेमपूरा' ही परोसा जाता है। छोटे-मोटे होटलो पर भी बडे अक्षरो मे लिखा होगा कि यहा 'टेमपूरा' मिलता है। जिस तरह से यहा व्यापार मे छोटी-से-छोटी चीज का काफी प्रचार और हल्ला-गुल्ला करते है, उसी तरह अन्य चीजो मे भी उनका यही हाल है। एक तरह से यह उनका स्वभाव ही हो गया है।

खाने-पीने व परोसने आदि के रस्म-रिवाज का इन लोगो को बडा ख़याल रहता है। वैसे देखा जाय तो जापानी ढग की चाय बनाना व परोसना मामूली-सी चीज है, लेकिन इसको उन्होंने एक बडा औपचारिक रूप दे रखा है। सार्वजनिक तौर पर इसका प्रदर्शन भी करते है। देखने मे आकर्षक व सुदर

स्त्रिया अच्छे-से-अच्छे किमोनो पहनकर और बहुत ही नजाकत के साथ अतिथियो के सामने ही चाय बनाती है। यह सारी विधि वे बडे चित्ताकर्षक रूप मे करती है। चाय बनाकर, दोनो पैर मोडकर घुटनो के बल आपके सामने बैठकर वे बडे ही सलीके से चाय परोसती है। उस चाय मे न तो शक्कर होती है, न दूध। कुछ हरी पत्तियो को उबालकर दे देते है, स्वाद मे यह कडवी होती है। इसे गरम काढा ही समझिए। हो सकता है कि स्वास्थ्य के लिए यह काढा लाभदायी हो, पर उसका स्वाद ऐसा बेस्वाद था कि एक बार से दूसरी बार उसको पीने की हमारी तो हिम्मत नही हुई। ठडा देश था, इससे कोई गर्म चीज पीने मे अच्छा तो जरूर लगता, पर आखिर स्वाद भी तो कोई चीज होती है!

लडाई के बाद सारे जापान मे, खासकर टोकियो आदि शहरो मे, अमरीका का काफी असर है। कहते है, जापान मे अभी भी ऐसे २०० से अधिक अमरीकी अड्डे है जहा जापानी लोग नही जा सकते। अमरीकनो की वजह से वहाका रहन-सहन काफी महगा होगया है। अमरीकी सिपाही वहा बहुत सख्या मे है और खुलेहाथो खर्च करते है। टोकियो को तो उन लोगो ने एक तरह से एशिया का पेरिस ही बना डाला है। नाइट-क्लबो की भरमार है। खाना-पीना, मौज-शौक रात देर तक चलता है। पेरिस के समान ही नाच-घर भी अनेक है। 'स्टेज रिव्यूज' भी अब वे करने लगे है, जहा सैकडो लडकिया एक साथ सज-धजकर मच पर नाचती है। मच की बनावट और नाच-गाने काफी मनमोहक होते है। इस तरह के

'स्टेज-रिव्यू' यहा वरावर प्रसिद्धि पा रहे है। इस प्रकार टोकियो मे पाश्चात्य सभ्यता की पूरी तरह से नकल हो रही है।

यहा के नाटको मे 'कावुकी' ढग का नाटक वहुत प्रसिद्ध है। इसके लिए खूब वडा मच होता है और उसमे वडे आकर्षक ढग से सजावट की हुई होती है। कपडे आदि पुराने ढग से पहनकर पुरानी लोक-गाथाओ से इसकी कहानी चुनी जाती है। 'काबुकी' नाटको मे सोगा भाइयो के अपने पिता की मृत्यु का बदला लेने की कहानी अलग-अलग रूप मे वताने का अधिक रिवाज है। कहानी पुराने जमाने की वृत्ति को वतानेवाली व हृदयस्पर्शी होती है। प्रसिद्धि सुनकर हम लोग भी एक दिन इस नाटक को देखने पहुच गए। जव हम पहुचे, नाटक शुरू हुए कुछ देर होगई थी। इसमे वातचीत ही ज्यादा होती है। सारे नट व कलाकार एक अजीब ढग से पेट के भीतर की गहराई से जोर की आवाज निकालकर बोलते है। अर्थ नही समझ पा रहे थे, इसलिए हमको तो वह आवाज बडी ही कर्णकटु लगी। लेकिन जव आस-पास के दर्शको पर हमारा ध्यान गया, तो स्पष्ट था कि कहानी व आवाज दोनो का ही उनपर गहरा असर हो रहा था। सारा वातावरण गभीर था और नाटक-घर मे एकदम निस्तब्धता छाई हुई थी। कोई दुखद प्रसग था। आसपास वैठे हुए सव लोग सिसकिया ले रहे थे। वातावरण इतना भारी था कि हम लोगो का वहा अधिक वैठना असभव होगया। हम लोग कानाफूसी करके एक-दूसरे के साथ वात भी नही कर सकते थे। धीरे-से भी वात करते तो सवकी आखे हम पर गड जाती। भाषा न समझने की वजह से हम

लोग उस वातावरण से एकरूप नही हो सके। इस कारण दस-पाच मिनट के भीतर ही हम लोगो को वहासे उठकर चला आना पडा। इस ढग के नाटक जापान की अपनी विशेषता है।

एशिया के देशो मे जापान हमेशा आजाद और ताकतवर देश रहा है, इसलिए किसी तरह की गुलामी वहा के लोग पसद नही करते। जापानियो की एक विशेषता यह है कि वे आपके अच्छे-से-अच्छे दोस्त हो जायगे, फिर भी राजनैतिक दृष्टि से उनके मन मे क्या विचार है, इसका आपको पता नही चल सकेगा। यह एक बडा राष्ट्रीय गुण है। हमे भी यह चीज उनसे सीखनी चाहिए। हमारे यहा तो लोकतत्र के नाम पर इतनी आजादी होगई है कि हर व्यक्ति खुले तौर पर देशवासियो और विदेशियो से भी राजनैतिक चर्चा और आलोचना करता रहता है। हम लोग विदेशियो के सामने भी अपनी सरकार की बुराई करते है और इसमे हमको कुछ हिचकिचाहट नही होती।

जापानी लोग स्वाभिमानी तो है ही, साथ ही देशभक्त भी है। जापान मे ही विदेशियो के ऐसे अड्डे हो जहा उन लोगो का प्रवेश भी निषिद्ध हो, यह उन लोगो को कैसे सहन हो सकता है? और फिर मनाही कोई सैनिक या मिलिटरी की गोपनीयता को कायम रखने के लिए नही है, बल्कि वहा अमेरिकन लोग परिवार-सहित रहते है, इससे एशियाई लोग, जिन्हे वे अपने से नीचा समझते है, वहा नही जावे, इसलिए है। अमेरिकन लोगो को रहने-सहने मे किसी तरह की कठिनाई पैदा न हो, उनकी स्त्रियो और बाल-बच्चो को आने-जाने मे किसी तरह का सकोच और असुविधा न हो, इसीसे यह नियम बना दिया गया है।

स्वाभाविक ही है कि इससे जापानियों के स्वाभिमान को बहुत धक्का लगा है और मन-ही-मन भीतर मे वे बहुत असतुष्ट और नाराज है। पर करे भी तो क्या ? लडाई मे उनकी हार हुई। हारे हुए देश के स्वाभिमान की कौन परवाह करता है ? इसलिए अभी तो वे चुपचाप बैठे है, लेकिन पहला मौका मिलते ही जापानी लोग इस तरह के अमरीकी आधिपत्य से जल्द-से-जल्द छुटकारा पाना चाहेगे, इसमे कोई शक नही।

जापान के एक प्रमुख बुजुर्ग व्यवसायी से बात हो रही थी। वह कई वर्ष पहले भारत मे भी रह चुके है। वे पिताजी के मित्रो मे से थे और उनका परस्पर व्यापारिक सबध भी था। पिताजी को बहुत छुटपन मे ही रायबहादुरी और ऑनरेरी मजिस्ट्रेटी मिली थी, तब उन्होने पिताजी से कहा था कि अग्रेजो की पदवी क्यो स्वीकार करते हो ? अग्रेज तो तुमको गुलामी मे रखकर लूट रहे है। उनकी इज्जत तुम्हे नही करनी चाहिए। पिताजी अग्रेज अफसरो को दावत आदि देते थे तब भी ये उसमे शामिल नही होते थे। मुझसे कहने लगे—"तुम्हारे पिताजी तो बाद मे गाधीजी के साथ होकर अग्रेजो मे बराबर लडे। तुम्हारा देश आजाद होगया, लेकिन हम अब गुलामी म फस गए।" उस समय जापानी सिक्का 'येन' से हमारे रुपये की कीमत अधिक नही थी। लेकिन अब एक रुपये मे ७५ येन आते है ! उनके मन के भीतर गहराई मे जो दुख था वह इन उद्गारो से साफ जाहिर होता है।

अपने राजा का मान अब भी यहा बहुत ज्यादा है। पुराने लोग तो अभी भी राजा को 'ईश्वर का अवतार' मानते है। नई

पीढी यद्यपि राजा को मान की दृष्टि से देखती है और चाहती भी है, तथापि अवतार की वह भावना नही रही। राजा भी भले और मिलनसार है। वहाकी सरकार राजा के लिए बहुत खर्च करती है। राजा को अवतार मानने की जो भावना जापानी लोगो मे रही है, उसकी वजह से लोगो को आपस मे भी मीठा सबध कायम रखने मे मदद मिलती है। नौकर अपने स्वामी के प्रति काफी आदर और भक्ति का भाव रखते है और अपना काम ईमानदारी से करना कर्त्तव्य समझते है, इसलिए वहा के मजदूर मेहनती है। हडताल पहले तो होती ही नही थी और अब भी बहुत कम होती है। मजदूर, मिल-मालिक, सरकार, व्यापारी, आदि सब मिलकर देशहित की बाते सोचते है। एक-दूसरे की तकलीफ समझकर उसे दूर करते है और मिलकर काम करते है। वे समझते है कि इसीसे उनका देश ताकतवर हो सकेगा। उनकी प्रगति तेजी से हो रही है, उसका एक कारण यह भी है।

मदिर वगैरा यहा कोई खास नही है। निक्को मे एक अच्छा मदिर जरूर है, पर यह भी हिदुस्तान के दक्षिण के मदिरो की तुलना मे बहुत मामूली है। फिर भी सारी दुनिया मे उसका नाम व प्रचार है। यहा यह कठिनाई जरूर रही है कि भूकप आदि की वजह से पुराने जमाने मे लकडी के मकान बनवाने पडते थे। उनमे हमेशा आग लगने का डर रहता था और कभी-कभी आग लग भी जाया करती थी। इसलिए प्राचीनता की दृष्टिसे यहा विशेष ऐतिहासिक चीजे यहा देखने को नही मिलती है। लेकिन यहा की छोटी-से-छोटी जगह को भी ये लोग अच्छी तरह से सुरक्षित रखते है, यात्रियो को वहा ले जाते है और

उनको उसका पूरा साहित्य देते है। यद्यपि यहा देखने लायक वहुत जगहे नही है, फिर भी प्रचार करके उस कमी को कुछ हद तक पूरी करने की कोशिश करते है।

जब हम लोग जापान पहुचे, उस समय वहा के वच्चो की छुट्टिया थी। जहा-कही छोटे-से-छोटा दर्शनीय स्थान देखने हम पहुचे, वही कोई चारसौ-पाचसौ विद्यार्थी (लडके-लडकिया) स्कूल की वर्दी मे अध्यापको की देख-रेख मे घूमते मिले। स्कूल के अधिकारियो के मार्गदर्शन मे छुट्टियो मे जापान के सारे वच्चो को देश के एक सिरे से दूसरे सिरे तक घुमाया जाता है। जापान मे शायद ही कोई विद्यार्थी होगा जिसने जापान के राजनैतिक, ऐतिहासिक, सामाजिक और प्राकृतिक दृष्टि से देखने योग्य स्थान अपनी आखो से न देखे हो। वच्चो के लिए विशेष प्रवध होता है। खास वसे होती है, जिनमे लाउड स्पीकर, मार्गदर्शक आदि की व्यवस्था होती है। मार्गदर्शक सव वाते उनको समझाते है और फिर समय मिलने पर खूब गाते-वजाते है। वच्चो मे अनु-शासन वहुत रहता है, यहातक कि कही-कही ऐसा भी अनुभव होता है कि वह जरूरत से अधिक है। वडे वच्चो को भी इतना शात और अनुशासनशील देखकर कभी-कभी यह आशका होने लगती है कि कही इसकी वजह से उनके जीवन मे उत्साह की कमी न पैदा होजाय! वच्चो से भरी हुई खास रेलगाडिया जाती है और इसमे उनका खर्च वहुत कम आता है। होटलो मे भी वहुत सस्ते दामो मे उनको रखने की हिदायत है। सरकार होटलो से ऐसे वच्चो को ठहराने पर कर नही लेती।

सारे वच्चे एक ही पोशाक मे एक साथ घूमते है—एक अनु-

शासन एक तरह का खान-पान, एक तरह का रहन-सहन, इस-लिए ऊच-नीच की भावना अपने-आप निकल जाती है और राष्ट्रीय भावना जागृत होती है। सारे देश के बारे मे उनको व्यक्तिगत जानकारी रहती है और किसीसे कभी चर्चा करे, तो अपने स्वत के अनुभव की बात वे सुना सकते है।

हमारे देश मे तो वहा की अपेक्षा सैकडो चीजे बहुत सुदर और देखने योग्य है। सास्कृतिक और ऐतिहासिक दृष्टि से भी उनका महत्व कुछ कम नही है। मेरे खयाल से हमारे स्कूली बच्चो को जापानी बच्चो की तरह देश-पर्यटन कराना हमारी दूसरी पचवर्षीय योजना का एक आवश्यक अग होना चाहिए। पचवर्षीय योजना के अतर्गत जो बडे-बडे बाध आदि बने है वे भी उन्हे बताये जा सकते है।

हम लोग जापान का ज्वालामुखी पहाड—आसो देखने गए हुए थे। वहा भी स्कूल के सैकडो बच्चे मौजूद थे। पहाड के नीचे उतरने मे हमे कुछ देर होगई। लौटकर देखा तो हमारी बस जा चुकी थी। लौटने का कोई और साधन नही था। हम लोग चिता मे पड गए कि अब क्या होगा। सिर्फ बच्चोवाली एक खास बस रह गई थी। उसमे भी बिल्कुल जगह नही थी। फिर भी विदेशियो को सकट मे देखकर उन्होने हमे भी साथ मे बैठा लिया। बस चली और बच्चो का गाना शुरु हुआ। गाइड एक लडकी थी। वह और बच्चो के साथ के मास्टर आदि भी गा रहे थे। गाइड को इसकी विशेष शिक्षा मिली थी, ऐसा लगता था। बीच-बीच मे कहानी व हँसी-मजाक भी चलता। बच्चे सब खूब खुशमिजाज थे। कुछ ही देर

मे उन्होने हम लोगो से दोस्ती कर ली और हम भो भारत के कुछ गाने गाने को वाध्य किया। जव हम उनसे जुदा हुए तो खूब जोरो से हाथ हिला-हिलाकर सवने हमको वडे प्रेमपूर्वक विदा दी। यह वच्चो के साथ अनपेक्षित यात्रा वडी मजे की रही और कई वार उसकी याद आ जाती है। पहले तो वस चूक जाने पर हमे वडी फिक्र होगई थी, पर वाद मे लगा कि अच्छा ही हुआ, नही तो वच्चो के साथ इस तरह से यात्रा करने का मौका कैसे मिलता!

: ६ :

जापानियों की मिलनसारिता

जापानी लोग स्वभाव से बहुत मिलनसार और मीठे लगे। ताज्जुब होता है कि इतने अच्छे लोग लडाई मे इतने कठोर और बर्बर कैसे हो जाते है! किसी जापानी से सडक पर भी कुछ पूछना चाहे तो वे नम्रता से आपका अभिवादन करेगे और जो चीज आप पूछेगे उसको अच्छी तरह से समझाने की कोशिश करेगे। सभव होगा तो आपके साथ जाकर आपकी जगह पर पहुचा भी देगे। हमारे एक मित्र ने बताया कि कठोर-से-कठोर भाषा का प्रयोग करने पर भी जापानी यही कहते है कि 'तुम मूर्ख हो।' इससे अधिक कठोर शब्द उनकी भाषा मे ही नही है। एक-दूसरे से वे लोग मिलते है तो बडे आदर और नम्रता से। स्त्रिया भी पुरुषो के प्रति आदर और नम्रता रखते हुए काफी झुककर मिलती है। यूरोप के समान सिर्फ पुरुषो का ही स्त्रियो के प्रति इकतरफा नम्रता रखने का रिवाज यहा नही है।

एक बार जब हम चजनजी झील देखने गए हुए थे तो एक मजेदार बात हुई। लिफ्ट से नीचे सार्वजनिक रेडियो लगा हुआ था। लाउड स्पीकर के द्वारा उसकी आवाज सब जगह पहुच रही थी। कोई भाई जापानी भाषा मे कुछ बोल रहा था। इससे हम लोगो का इस ओर कोई ध्यान नही गया। पर इसाईजी[1] दौडकर रेडियो के नजदीक पहुचे और हमे भी पास बुलाने लगे।

---

१ एक जापानी साधू जो वहा हमारे साथ साथ आए हुए थे।

पास पहुचने पर उन्होने कहा कि इसमे तो आप लोगो का और आपके पिताजी का नाम लिया जा रहा है। कोई आप लोगो के बारे मे अपने सस्मरण सुना रहा है। हम लोगो को बडा ताज्जुब व कौतूहल हुआ कि यह कौन व्यक्ति होगा। साथ ही खुशी भी हुई कि विदेश मे कोई रेडियो पर हमारी बात कर रहा है और अनायास ही हमे उसे सुनने का मौका मिल गया, नही तो हमे उस बारे मे क्या पता चलता।

बाद मे हमे मालूम पडा कि पिताजी के एक पुराने जापानी मित्र श्री सुकाडा, जो बहुत वर्षो पहले भारत मे रह चुके थे, रेडियो मे अपने सस्मरण सुना रहे थे। आजकल वह जापान की सबसे बडी कपडे की मिल के अध्यक्ष है। हम लोगो से मिलकर वह बडे प्रसन्न हुए थे और उनको अपने उन दिनो की याद, जब वह भारत मे रहे थे, ताजा होगई थी। पिताजी के प्रति उनका बडा प्रेम था। वह भी उन्हे बार-बार याद आ रहा था। इसलिए इसीको उन्होने उस दिन के बोलने का विषय बना लिया था।

वह उम्र मे पिताजी से बहुत बडे है। हम लोग तो उनके सामने बच्चे-जैसे है, पर उन्होने हमारी इतनी खातिर की कि हम गद्गद् होगए। खुद दो-तीन बार हमारे होटल मे आये। हमे अपने घर ले गए और वहा अपनी पत्नी, बच्चो, बहुओ व उनके बच्चो से परिचय कराया। अपना सारा घर घूमकर बताया और जापानी लोग कैसे रहते है यह अच्छी तरह से समझाया। हमारे सम्मान मे एक खासा भोज भी दिया। वहा के बडे-बडे व्यवसाइयो से हमारी मुलाकात करवाई। इतना ही नही, जब-

तक हम जापान मे रहे, हमारी बराबर देख-भाल करते रहे। उनसे मिलकर हम लोगो को सचमुच बडा अच्छा लगा और उनके सारे परिवार से हम लोग घुलमिल गए।

यहाके कुछ मित्रो के मार्फत एक जापानी लडकी से हमारा अच्छा परिचय होगया था। जापान मे भाषा की कठिनाई काफी होती है, इसलिए हम एक मार्गदर्शक मित्र की खोज मे थे। टोशिको नाम की एक लडकी ने, सिर्फ इतना जानने पर कि हम लोग भारत से आये है, हमारा मार्गदर्शक बनना सहर्ष स्वीकार कर लिया। बडी खुशी के साथ अपना सारा समय हमारे साथ व्यतीत करने को वह तैयार होगई। भारत के प्रति उसके प्रेम का यह एक दिग्दर्शन था। हीरोशिमा के पास एक देहात मे रहनेवाली यह लडकी अपनी कालेज की शिक्षा के लिए टोकियो मे रहती थी। न जाने क्यो, शुरू से ही भारत के प्रति उसका बडा आकर्षण रहा है। अग्रेजी जानती है और भारत के प्रति उसका विशेष प्रेम होने से वहा के कुछ व्यक्तियो ने महात्माजी की अहिसा पर लिखी किताब का जापानी अनुवाद करने का काम उसको सौपा था। अनुवाद करते-करते उसको इस किताब का गहरा अध्ययन करना पडा। उसपर महात्माजी के विचारो का बहुत प्रभाव पडा। जापान मे शाकाहार-जैसी कोई वस्तु नही है, फिर भी वह बहुत प्रयत्न कर रही है कि मासाहार त्याग दे। अपने व्यक्तिगत जीवन मे भी गाधीजी के सिद्धातो पर चलने की बडी कोशिश कर रही है। भारत पर कोई भी किताब या अन्य साहित्य मिले तो बडी प्रसन्नता से पढती है। भारत आने के लिए बडी उत्सुक है और राह देख रही है कि कब यहा पहुच सके।

एक जापानी लडकी, जिसकी उम्र कोई २१-२२ वर्ष से अधिक नही होगी, भारतवर्ष के प्रति क्यो इतनी आकर्षित हुई, यह आश्चर्य की बात है। गाधीजी और उनके पहले भी जो तपस्वी और महर्षि अपने यहा होगए है, उनकी तपस्या का ही यह फल है। जिस समय हम लोग जापान से जहाज में वापस आने के लिए रवाना हुए, उस रोज वह खूब रोई, मानो किसी निकट व्यक्ति का बिछोह हो रहा हो।

कुछ ही रोज मे मेरी पत्नी विमला और मेरा उससे इतना निकट परिचय होगया कि हमे यह खयाल ही नही आता कि वह हमारे स्वजनो मे नही है। एक इतनी दूर के विदेश की रहने-वाली लडकी, उससे हमारा क्या लेन-देन ! फिर भी हम लोगो का विदा होने पर जी भर आया।

इसी तरह से वहा दो जापानी बौद्ध भिक्षुओ से भी मिलना हुआ। उनमे से बडे साधु श्री मारूयामा कई दिनो तक वर्धा तथा सेवाग्राम मे बापूजी व पिताजी के पास रह चुके थे। उनके दूसरे साथी श्री इमाई भी भारत मे करीब दो वर्ष रह चुके है और बहुत अच्छी हिंदी लिख और बोल लेते है। श्री मारूयामा तो पिताजी को अच्छी तरह जानते थे। मै भी उनसे मिला था, लेकिन इमाईजी से तो यही मुलाकात हुई थी।

श्री मारूयामा के कहने से इमाईजी हम लोगो के साथ काफी घूमे। टोकियो मे हर तरह की सास्कृतिक और धार्मिक प्रवृत्तियो से उन्होने हमे परिचित कराया। वे हमको लेक चूज-नजी व निक्को ले गए, जहा जापान का सर्वोत्तम मदिर है। यह भी वडे मजे के आदमी है। हम तो पहले समझते थे कि ये केवल

साधु है। इनमे रूखापन होगा। साथ रहने पर कोई हँसी-मजाक या आनददायक वातावरण नही रहेगा, लेकिन वह तो ठीक इससे उल्टे निकले। खूब रसिक हैं। दुनियादारी की सारी चीजो से जानकार, उनको अच्छी तरह से समझते हुए भी उनसे निर्लिप्त। इमाईजी को भारत से विशेष प्रेम है। भारत वुद्ध भगवान का जन्मस्थान है, इसका तो आर्कपण है ही, पर वैसे भी उनको वीच-वीच मे यहा आना अच्छा लगता है। अभी भी वह यहा आगए है। विनोबाजी का भूदान का काम उन्हे वहुत पसद है और उन्हे इसमे वहुत रस है।

भूदान की भूमिका और कार्य-प्रणाली अच्छी तरह से समझ लेने पर जापान मे भी वह इसका प्रचार करना चाहते है। वापू व विनोबा पर इनकी वडी श्रद्धा है। इनके साहित्य का जापान में निरतर प्रचार करते है। वुद्ध भगवान पर इनकी असीम आस्था है। यहा के वौद्ध भक्तो को भी इनकी पूरी मदद रहती है। इनका यह भी विचार हो रहा है कि वौद्ध गया मे विनोवाजी द्वारा चलाये गए समन्वय-आश्रम मे ही क्यो न वस जाय। कुछ समय ये पद-यात्रा मे विनोवाजी के साथ थे। तव विनोवाजी इनसे जापानी भाषा सीखते थे।

इस वारे मे, हाल ही मे विनोवाजी की यात्रा में से लिखा हुआ उनका मेरे नाम से एक पत्र आया है, वह वडे मार्के का है। इससे उनकी मनोदशा का स्पष्ट चित्र मिलता है। उस पत्र का कुछ अश नीचे दे रहा हू। पत्र हिंदी मे ही लिखा हुआ है।

"तारीख २० दिसवर से पू० विनोवाजी के साथ वेजवाडा से यात्रा शुरु की। मै गाव-गाव घूमकर भारत का सच्चा दृश्य

देख रहा हू । शहर मे सच्चे भारत का दर्शन नही होता । सच्चे भारत का दर्शन तो गाव मे ही है, ऐसा मेरा खयाल है ।

"मै पू० विनोवाजी के आदोलन को सिर्फ भूमि-क्राति और सपत्ति के समान बटवारे की दृष्टि से नही देखता हू । बौद्ध धर्म मे वोधिसत्व का सबसे वडा चरित्र है 'दान-पारमिता' और वोधिसत्व के नियमो मे सबसे बडा नियम है 'अहिसा परमो धर्मः' । इसलिए सिर्फ अहिसा नही चल सकती । अहिसा के साथ दान-पारमिता भी चलनी चाहिए ।"

"ये बाते हमारे गुरुजी हमेशा कहा करते है । इसलिए मै विनोवाजी के आदोलन को इस दृष्टि से देखता हू और मुझे वडा आनद आता है ।"

---

१ दान, शील, शान्ति, वीर्य, ध्यान तथा प्रज्ञा की उत्कृष्टता ।

: ७ :

गीशा लड़कियां

गीशा लडकियो के बारे मे जापान के बाहर काफी सुना जाता है। गीशा उन लडकियो को कहते है जो बडे सुरुचिपूर्ण ढग से पुरुषो का मन-बहलाव करती है। जापान की यह एक विशेषता है जो बहुत पुराने काल से चली आ रही है। शाम को थके-मादे लोग मानसिक विश्राति के लिए इनके यहा चले जाते है।

हमने भी इनके बारे मे काफी सुना तो स्वाभाविक रूप से वहा जाने का मन हुआ। प्राय वहा पुरुष ही जाते है, स्त्रियो को ले जाने का रिवाज नही है। लेकिन हम लोगो को तो मन-बहलाव के अलावा कौतूहल अधिक था। इससे विमला और मै दोनो ने साथ-साथ ही वहा जाने का तय किया।

जब हम लोग वहा पहुचे तो चार-पाच गीशा युवतियो ने सुदर किमोनो पहनावे मे नम्रता और मिठास से अभिवादन करते हुए हम लोगो का स्वागत किया। एक ने अपने हाथो से हम लोगो के जूते खोले और चप्पल पहनाकर भीतर ले गई। एकदम साफ-सुथरा मकान था। जिस कमरे मे वे हमे ले गई वह बहुत ही सुरुचिपूर्ण ढग से, पर बहुत कम चीजो द्वारा, सजाया गया था। कमरे मे लकडी के फर्श पर चटाइया बिछी थी और उनके कोनो पर कीले ठुकी हुई थी। उसीपर छोटी-छोटी गद्दियो पर हमे बैठाया गया। हमारे सामने एक छोटी मेज थी, जिसपर हम लोग खाना खानेवाले थे। हम लोग शाकाहारी थे और

शराब भी नही पीते थे, यह उनके लिए मुसीबत की बात थी। फिर भी जो कुछ उनके पास था, उसे वे लडकिया बडे सुदर ढग से परोसती रही, साथ ही सुरुचिपूर्ण तरीके से मन-बहलाव की बाते भी करती जाती थी। उन्हे कोई खास अग्रेजी नही आती थी, नही तो, कहते है, बातचीत करने मे वे इतनी निपुण होती है कि हर किसीका मन प्रसन्न कर देती है। सारी थकावट काफूर हो जाती है। बात को बडे लहजे के साथ कहने और तुरत उत्तर देने की कला का उन्हे विशेष शिक्षण मिलता है। जैसे मुगल-दरबार मे बातचीत करने का विशेप तरीका हुआ करता था और जिसे सुनकर अब भी दिल बाग-बाग हो जाता है, उसी तरह का कुछ तरीका उनका भी होता है। भोजन करते समय आम-तौर से शराब का दौर तो चलता ही है और चाहे तो उसी समय या उसके बाद नाच-गान भी होता है। शराब का तो वहा आम रिवाज है।

बडे-बडे व्यापारी अपने ग्राहको को खुश करने के लिए उन्हे ऐसी जगह ले जाते है। ऐसे घरो मे जाने मे बेइज्जती नही समझी जाती और लोग निस्सकोच जाते है। अच्छे घरो मे सीमा के बाहर कोई नही जा सकता तथा वहा जाने पर अच्छा ही लगता है। लेकिन ऐसे पेशो मे बुराइया घुस आने की सभावना तो पूरी है ही; और इसीलिए कुछ जो नीचे दर्जे के और सस्ते घर है उनमे खराबिया भी बहुत घुस गई है। ऐसे घरो की वजह से गीशा लडकियो का पेशा बडा अपमानित हो गया है। फिर भी अपने ढग की यह एक विशेष सस्था हो गई है इसमे कोई शक नही।

: ८ :

खेल-कूद

विद्यार्थी और युवक खेल-कूद के बहुत शौकीन है। बेसबॉल सबसे अधिक लोकप्रिय खेल है। हम लोगो ने भी दो-तीन मैच देखे। वैसे तो यह खेल भी क्रिकेट के ढग से ही खेला जाता है, लेकिन इसमे खेल की रफ्तार तेज होती है और देखनेवालो की दिलचस्पी बराबर बनी रहती है। वैसे यह खेल सबमे ज्यादा अमरीका मे प्रचलित है। उन्हीकी वजह से जापान मे भी चल पडा है। अमरीका मे तो अच्छे खिलाडी को साल मे डेढ-दो लाख रुपये तक की कमाई इस खेल मे खेलने से हो जाती है। मामूली खिलाडियो को भी बीस-पच्चीस हजार रुपये आसानी से मिल जाते है। क्रिकेट मे तो समय बहुत बरबाद होता है। चार-पाच दिन तक एक मैच चलता है और उसमे बहुत कम मौके ऐसे होते है जबकि खेल दिलचस्प हो। लेकिन बेसबॉल का खेल तो ढाई-तीन घटे मे ही पूरा हो जाता है और दिलचस्पी हमेशा बनी रहती है। हर शहर मे स्टेडियम बने है, जहा बराबर मैच होते रहते है। खेल अधिकतर शाम को अधेरा हो जाने पर होता है, लेकिन स्टेडियम पर बिजली की रोशनी खूब करदी जाती है, जिससे खेल देखने मे जरा भी कठिनाई नही होती। बेसबॉल 'प्रोफेशनल' को देखने बहुत लोग जाते है। कालेजो के आपस के खेल मे भी लोग दिलचस्पी लेते है। अपने-अपने कालेज के लडके अलग-अलग बने हुए स्थानो मे एक साथ बैठते है। उनका ताली बजाना और

नारा लगाना, गाना गाना अपने-अपने मार्गदर्शकों के आदेश पर होता है। उनके इशारे पर अपनी-अपनी टीम के खिलाडियों को जोश देने के लिए ये लोग बराबर एक साथ आवाज लगाते हैं। कभी-कभी तो कालेज के बैंड को भी साथ ले जाते हैं। मैच बराबरी का रहा तो दर्शकों में भी बड़ा जोश आ जाता है।

कुश्ती भी यहां लोकप्रिय है। कुश्ती के मुख्य दो प्रकार हैं। एक को जूडो कहते हैं, जिसको हम लोग जिजित्सू के नाम से जानते हैं। इसे वे आत्मरक्षा की कुश्ती बताते हैं। इसके स्कूलों में लड़के हजारों की संख्या में जाते हैं। इसमें सबसे पहले खुद ही गिरने का अभ्यास करना पड़ता है। ठीक ढंग से गिरने पर बहुत कम चोट कैसे आये, यह इस कुश्ती में सीखने की खास बात है। जब हम लोग देखने गए थे तब संयोगवश कुछ खास अतिथि आये हुए थे। उनके लिए वहां विशेष प्रदर्शन किया गया था। हमें भी अनायास ही इसे देखने का मौका मिल गया।

इस तरह की कुश्तियों की खासियत यह है कि कमजोर विरोधी अपने से अधिक ताकतवर का सामना कर सकता है। अपने विरोधी की ताकत का खुद उपयोग कर लेना, यह इसकी खूबी है। सामनेवाला जब अपनी पूरी ताकत लगा रहा हो उस समय कमजोर आदमी हट जाय, चकमा देदे, तो ताकतवर आदमी अपनी ताकत के वजन को लेकर खुद ही जमीन पर गिर पड़ता है।

दूसरे प्रकार की कुश्ती को सुमो कहते हैं। इसमें आम लोग भाग नहीं लेते। लेकिन इसे देखनेवालों की बड़ी भीड़ रहती है। हमें टिकट बड़ी मुश्किल से मिले। जिस दिन वहां के राजा गए थे उसी रोज हमें भी जाने का मौका मिल गया। वहां के

लोग तो इसे बहुत उत्तेजक मानते है, लेकिन हम लोगो को ऐसा कुछ नही लगा। इसके विपरीत हमे तो वह नीरस ही लगा। एक दिन मे करीब चालीस-पचास कुश्तिया होती है। एक छोटा-सा गोलाकार मैदान बना होता है,जिसपर कुश्ती होती है। यदि किसी पहलवान ने अपने प्रतिद्वद्वी को नीचे गिरा दिया या गोले के बाहर निकाल दिया तो वह जीत मानी जाती है। इसमे तेजी आने के पहले ही कुश्ती खतम हो जाती है। पाच-सात मिनट तो भिडने के पहले इधर-उधर करने मे बीत जाते है और भिडते है तो सिर्फ तीस चालीस सेकण्ड के लिए। कुश्ती इससे ज्यादा नही चल पाती। एक चीज जरूर दर्शनीय होती है। वह यह कि सारे पहलवान कम-से-कम ३०० पौण्ड से ऊपर के ही होते है। लेकिन ३५०-४०० पौण्ड के भी बहुत-से पहलवान होते है, और जब भिडते है तो ऐसा मालूम होता है, जैसे दो हाथी के बच्चे भिड गए हो। आमतौर से जापानी लोग कद में नाटे होते है, इसलिए आश्चर्य होता है कि इतने स्थूल शरीर के पहलवान वे कैसे पैदा करते है।

बर्फ के ऊपर स्केटिग और रोलर-स्केटिग करना भी बहुत प्रचलित है। रोलर-स्केटिग करने एक दिन हम लोग भी पहुच गए। शुरू-शुरू मे सीखने मे जरूर थोडा समय लगता है, लेकिन खेल यह भी एक दिलचस्प मालूम देता है। 'बोलिग सेंटर' मे भी काफी लोग जाते है। लोहे की बडी गेद को फेककर कुछ दूर पर खडे १० डण्डो को गिराना होता है। जितनी कम गेद फेककर सारे डडे गिरा दिये जाय, उतना ही अच्छा माना जाता है।

टेबिल टेनिस तो यहा का प्रसिद्ध खेल है ही। दुनिया के

कई सर्वश्रेष्ठ खिलाडी उन दिनो वहा मोजूद थे। उनकी कोई प्रतियोगिता नही हो रही थी, इससे हम लोगो को उनका खेल देखने का मौका नही मिला। और लोग तो टेबिल टेनिस साधारण लकडी के वल्ले से खेलते है। इन लोगो ने उस वल्ले पर स्पज लगाकर एक नई तरह का वल्ला वना लिया है।

घर के भीतर के खेलो मे 'पचिको' वहुत ही प्रचलित है। आठ-दस आना देकर करीव वीस-पच्चीस इस्पात की गोलिया मिल जाती है। इनको छेद मे से डालकर स्प्रिग के हैडल से खीचकर छोड देने पर ये गोलिया अलग-अलग खानो से होती हुई किसी एक खाने मे गिर जाती है। कई वार तो वे फालतू खानो मे गिरती है और वदले मे कुछ नही मिलता। लेकिन ठीक खाने मे गिर गई तो इसी तरह की पाच-दस नई गोलिया मिल जाती है। इस तरह यह खेल विना थकान के घटो खेला जाता है। एक तरह के जुए का-सा मजा इसमे आता है। इस तरह के खेल की सैकडो दूकाने टोकियो तथा अन्य शहरो मे है। एक-एक दूकान मे साठ-सत्तर मशीने होती है और खेलनेवालो की भीड लगी रहती है। कई वार वहुत-सी गोलिया जमा हो जाती है, तो उनको लौटाने पर चॉकलेट आदि चीजे मिल जाती है। जापान का यह एक तरह का राष्ट्रीय खेल होगया है, यह कहा जाय तो अतिशयोक्ति नही होगी। विमला पर भी इसका खब्त सवार हो गया। थक-थकाकर रात को देर से लौटते। तव भी होटल मे आने से पहले थोडी देर के लिए पचिको खेलने का उसका आग्रह जरूर रहता। जाते थोडी देर के लिए, पर मन मेरा भी लग जाता। फिर तो दूकान वद होती तवतक खेलते रहते। विमला

का तो इसमे 'लक' भी वहुत चलता। वह वहुत जीतती। एक दिन तो वह जीतती ही चली गई, यहातक कि उसके चारो तरफ खेलनेवालो की भीड इकट्ठा होगई।

९ :

अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन

हम लोग जब जापान मे थे तभी अतर्राष्ट्रीय व्यापार-मेला टोकियो मे हुआ था, जिसका उन्होने बडे पैमाने पर, खासकर अपना माल विदेश निर्यात करने के हेतु, इतजाम किया गया था। उसमे छोटी-बडी हर तरह की मशीने उपलब्ध थी। बहुत जल्दी-जल्दी एक किनारे से दूसरे किनारे तक सिर्फ चक्कर लगाने मे ही दो दिन लग जाते थे। अपने यहा की प्रदर्शिनियो की तरह वहा किसी चीज की बिक्री नही होती थी, बल्कि सिर्फ साहित्य मिलता था और मशीने दिखाई जाती थी। उनके बारे मे कुछ पूछताछ करना हो तो उनका समाधान कर दिया जाता था। मेले के सिलसिले मे लाखो रुपयो का तो सिर्फ साहित्य ही छपा होगा। हर दूकान पर मशीनो की विस्तृत जानकारी देनेवाला साहित्य मुफ्त दिया जाता था। खेती करने की भी सब तरह की बडी मशीने और छोटे औजार वहा थे।

इन्ही दिनो टोकियो मे एक दूसरा अतर्राष्ट्रीय मेला लगा हुआ था। यह मोटरो का था, इसमे यात्रियो को मोटर, सामान लादने की मोटर, तीन चक्को की गाडिया, मोटर-साइकिल, स्कूटर आदि सब तरह की गाडिया शामिल थी और जापान मे कौन-कौन-सी गाडिया बनती है, इन सबका पूरा विवरण भी हर एक को बताया जाता था।

इन मेलो के साथ ही अतर्राष्ट्रीय कॉमर्स का पच्चीसवा

अधिवेशन भी टोकियो मे हुआ। महाराष्ट्र कॉमर्स चेवर की तरफ से मैं इसके भारतीय प्रतिनिधि-मडल मे शामिल था। व्यापारियो की सबसे बडी सस्था का अधिवेशन किसी एक एशियाई देश मे होने का यह पहला ही मौका था। इसका गौरव सबसे पहले जापान को मिला, और यह सब तरह से उपयुक्त ही था। इन लोगो ने इस सम्मेलन को हर तरह से सफल बनाने मे बडी मेहनत की। दुनिया के सारे देशो से करीब बारहसौ प्रतिनिधि इकट्ठे हुए थे। प्रतिनिधियो के साथ लगभग तीनसौ स्त्रिया भी पहुच गई थी। सारे टोकियो मे सम्मेलन की बडी धूम रही। जहा कही जाते, हम लोगो का विशेष रूप से स्वागत होता। वहा के बडे-बडे नेताओ ने हम लोगो को खाने के लिए बुलाया। जापान के बारे मे विदेशो से आये हुए अतिथि लोग अच्छा असर लेकर जाय, इसकी अधिकारियो के अलावा, आम जनता ने भी पूरी कोशिश की। ससार के सारे व्यावसायिक नेता वहा से बहुत खुश होकर गए। उनको अनुभव होगया कि एशिया मे भी इतना बडा अतर्राष्ट्रीय सम्मेलन अच्छी सफलता के साथ किया जा सकता है।

भारत से कोई ४६ प्रतिनिधि यहा पहुचे थे। दस प्रतिनिधियो के साथ उनकी स्त्रिया भी थी। भारत से ऐसे सम्मेलन के लिए इतनी अधिक सख्या मे प्रतिनिधि पहली ही बार गये थे। यह ठीक भी था, क्योकि यह पहला ही अवसर था जबकि ऐसा सम्मेलन किसी एशियाई देश मे हो रहा था।

सम्मेलन का मुख्य विषय बहुत सोच-समझकर रखा गया था—"एशिया की समस्या—दुनिया की प्रगति।' सब लोगो ने

इसे मान लिया था कि एशिया की समस्याओं को हल किये विना और उसकी प्रगति के वगैर दुनिया की प्रगति होना सभव नही है। यह वात सबकी समझ मे आ रही थी कि एशिया के उन देशो की तरफ, जो गरीव है और जहा औद्योगिक उन्नति कम हुई है, धनवान देशो को अधिक ध्यान देना चाहिए। इन सब वातो की जानकारी होते हुए भी उनमे से कई लोगो के दृष्टिकोण मे कुछ फर्क था, जो स्वाभाविक रूप से हम लोगो को नही रुचा। उनका कहना था कि आपको मदद की जरूरत है, यह ठीक है और हम मदद करना भी चाहते है, पर आप हमसे मदद मागिये और हम खुशी से देगे। आप उसे वरावरी के नाते या अधिकारपूर्वक कैसे माग सकते है? आखिर आप तो मागनेवाले ठहरे और हम विना किसी वदले के मुफ्त मे आपको देनेवाले! देनेवाले और लेनेवाले मे फर्क तो रहेगा ही! उनकी समझ मे यह वात नही आरही थी कि गरीव देशो की मदद करना उनके ही स्वार्थ मे है। जवतक गरीव देशो मे रहनेवालो का जीवन-स्तर ऊचा नही होगा, उन देशो मे कम्युनिस्ट तानाशाही आने का डर हमेशा वना रहेगा। इसके अलावा गरीव देशो का जीवन-स्तर वढे तभी उन देशो की पैदावार की खपत वहा हो सकती है। हम लोगो ने इसे समझाने का काफी प्रयत्न किया, लेकिन गरीवो के प्रति धनवानो की जो वृत्ति होती है, उससे उन्हे वचाना वहुत कठिन होता है।

भारत के प्रतिनिधि-मडल के नेता श्री लालजी मेहरोत्रा थे। दूसरे सदस्य थे ववई से श्री आर० जी० सरैया, श्री एम० ए० मास्टर, आध्र से श्री सोमयाजुलू, कलकत्ता से सर विजयसिह

राय और श्री जी० एल० बसल, भारतीय समिति के मत्री। श्री लालजी मेहरोत्रा कई वर्षो से इस सस्था का काम कर रहे है, इसलिए मुख्य सम्मेलन की पहली सभा का अध्यक्ष-पद ग्रहण करने के लिए उनसे कहा गया तो सभी एशियावासियो का मन प्रफुल्लित हो उठा। बाद मे फिलिपाइन के प्रतिनिधि-मडल के नेता ने जब यह कहा कि पिछडे हुए देशो के प्रतिनिधि को ऐसी सभा की अध्यक्षता करते देखकर उनका दिल गद्गद् होगया और उनकी आखो से आसू बहने लगे, तो सब लोगो को और भी अच्छा लगा।

सम्मेलन मे करीब ८७ प्रस्ताव पास हुए। अधिकतर तो सर्वसम्मत ही थे। जिन देशो के प्रतिनिधि सम्मेलन मे भाग लेते है उन देशो की राष्ट्रीय सरकारो, सयुक्त राष्ट्र-सघ तथा उनसे सबधित अतर्राष्ट्रीय सस्थाओ को ये प्रस्ताव भेजे जाते है और यह उम्मीद रखी जाती है कि वे लोग, जहातक हो, उनपर अमल करे। इस दृष्टि से इन प्रस्तावो का बडा महत्व है। अमरीका व यूरोप के बडे-से-बडे व्यावसायिक नेता यहा मौजूद थे। इस सम्मेलन मे जेनरल इलेक्ट्रिक टी० डब्ल्यू० ए०, इपीरियल केमिकल इड-स्ट्रीज तथा लायड्स बैंक के चेयरमैन भी उपस्थित थे।

एक देश से दूसरे देश जानेवाले माल पर चुगी कैसे कम हो, सामान ले जाने मे जो असुविधाए है वे कैसे दूर हो इस तरह के प्रस्तावो पर भी विचार होता था। मतलब यह कि अतर्देशीय व्यापार कैसे अधिक-से-अधिक बढे यह भावना इन प्रस्तावो मे रहती थी। कभी-कभी कुछ मतभेदवाले प्रस्ताव भी होते थे। समुद्री जहाज चलानेवाली कपनियो के बारे मे

एक ऐसा ही प्रस्ताव था। प्रस्ताव यह था कि जिस देश की कपनी के जहाज चलते हो उस देश को ही ऐसी कपनिया अपनी कमाई पर इनकमटैक्स दे, न कि उस देश को जहा के व्यापार से उनको लाभ होता हो। जहातक हमारा सवाल है इसका मतलब यह हुआ कि यूरोप की कपनिया भारत के व्यवसाय से तो कमाई करे पर उसपर टैक्स अपने देश को देवे, भारत को नही। स्वाभाविक ही था कि अपने राष्ट्र के हित मे न होने के कारण इसका हमने विरोध किया।

: १० :

अर्थ-व्यवस्था

जापानी लोग स्वभावत विक्रेता बहुत अच्छे है। आपसे बडी नम्रता से पेश आवेगे और जिस तरह की सुविधा आपको चाहिए वह देने को तैयार रहेगे। जापान की सारी अर्थ-व्यवस्था इसीपर निर्भर करती है। उनके यहा कच्चा माल बहुत कम पैदा होता है। कच्चा माल बाहर से लाकर उससे चीजे बनाकर फिर विदेशो मे बेचना, यही उनका मुख्य पेशा है। चीन का बडा बाजार उनके हाथ से निकल जाने से उनके सामने बडी समस्या उपस्थित होगई है। फिर भी बडी हिम्मत व मेहनत से काम करके, एक हारा हुआ देश होते हुए भी, एशिया के राष्ट्रो में वह आज भी बडा उन्नतिशील देश होगया है।

विदेशियो को उनसे कोई चीज खरीदनी हो तो उनके यहा जो पाच-छ बडे व्यापारिक सगठन है, उन्हींके पास जाना पडेगा। छोटी सस्थाए आपको न भाव बतायगी, न कुछ और। ये ५-६ सस्थाए ही वस्तुओ के भाव आदि पहले ही आपस मे बैठकर तय कर लेती है, जिससे आपको, उनके आतरिक व्यवहार मे प्रतियोगिता होते हुए भी, उसका लाभ नही मिल पाता। उनकी यह बात हमारे लिए भी सीखने योग्य है।

जापानी लोग जो चीजे बनाते है, उनको बेचने का भी उनका विशेष तरीका है। हरएक जिले मे बिक्री की एक केन्द्रीय सस्था (मार्केटिंग सोसाइटी) होती है। इस तरह की बडी [illegible]

सारी चीजो का देश-विदेश मे प्रचार करना और हर जगह उसकी बिक्री करना, इस सस्था का मुख्य काम होता है। जो माल बनानेवाले है, उनको अपने माल को बेचने की फिक्र बहुत कम हो जाती है और चीज का दाम भी ठीक मिल जाता है। हर जिला अपनी-अपनी विशेष चीजो का खूब जोर से प्रचार करता है। उनके लिए विशेष साहित्य छापता है और विदेशो मे आयात करनेवालो से, सब निर्माताओ की तरफ से, बराबर पत्र-व्यवहार करता रहता है। कारखानेदारो और व्यवसाइयो मे मित्सूबिसी सगठन सबसे बडा है। छोटी से लेकर बडी-बडी मशीने तक यहा बनती है और आयात-निर्यात का भी काम होता है। इनके यहा छोटी-बडी इतनी चीजें बनती है कि उनकी सूची देखी जाय तो बहुत कम ही ऐसी चीजे होगी, जो ये न बनाते हो।

यद्यपि जापान ने औद्योगिक प्रगति बहुत बडे परिमाण मे की है, तथापि आज उसके सामने बहुत बडी समस्या उपस्थित है। उनको कच्चा माल मुहमागे दाम पर बाहर से मगाना पडता है। दूसरे महायुद्ध के बाद उनके यहा मजदूरी की दर भी बढ गई है। इसलिए मशीनरी व अन्य वस्तुए लडाई के पहले वे जितने सस्ते दामो मे अन्य देशो को बेचा करते थे आज उतनी आसानी से नही बेच पाते। चीन का बडा बाजार भी उनसे निकल गया है। ऐसी हालत मे जबतक किसी भी सूरत से वे चीजो के दाम घटाते नही, दुनिया की प्रतियोगिता मे ठहरना उनके लिए मुश्किल होगा। जापानी चीजो के बारे मे अन्य देशो मे यह राय रही है कि मशीनरी व अन्य चीजो की किस्म

यद्यपि बहुत ठीक नही होती फिर भी सस्ती बहुत होती है। लडाई के बाद उनकी किस्म मे सुधार हुआ है, फिर भी इस पुराने खयाल को दूर करने मे उन्हे बडी कठिनाई पडती है। इसलिए पूरी कोशिश करके उनको अपनी चीजो के दाम कम करना है। जापानी लोग बहुत व्यवस्थित और मेहनत से काम करते है, इसमे कोई शक नही, लेकिन मुझे उनके काम करने के ढग मे कुछ शिथिलता व धीमेपन का आभास हुआ। जहा हमारे यहा बीस आदमियो से काम हो जाता है वहा उनके यहा पच्चीस-तीस आदमी रखते है। इस वजह से भी उनकी चीजो का उत्पादन-मूल्य अधिक हो जाता है। इसकी उनको आवश्यकता पडती है इसलिए वे करते है या ऐसा वहा रिवाज-सा ही पड गया है यह कहना कठिन है। इससे यह लाभ जरूर होता है कि देश के पढे-लिखे नौजवानो मे बेकारी कुछ कम हो जाती है। कारखाने चलानेवालो के पास कुछ अधिक लोग होने की वजह से विदेशियो की देखभाल करने और खुशामद करने के लिए भी वे इन लोगो का लाभ उठा लेते है। व्यक्तिगत सबध हो जाने से व्यापार प्राप्त करने मे कुछ सुविधा तो जरूर होती है; पर इस तरह से उनका खर्चा वहा की बनी हुई चीजो पर पडे यह कहा तक उचित है यह प्रश्न विचारणीय है।

न रहे, बल्कि एक-दूसरे को सहयोग दे और एक-दूसरे को मज-बूत बनावे । भारत और जापान के बीच अधिक व्यापारिक सह-योग व वस्तुओ का आदान-प्रदान होने की आवश्यकता है। इससे दोनो देशो की ताकत बढेगी । जबतक एशियावासी पश्चिम पर निर्भर करेगे, पश्चिम हमारी कद्र कभी नही करेगा। दुनिया का यही रिवाज है कि जो अपने पैरो पर खडा होता है, उसीकी इज्जत होती है ।